

सनातन धर्म



केडी खोत

प्रस्तावना

मेरा नाम केडी कैलास खोत है। मैं समस्त विश्व में सनातन धर्म की पुनर्स्थापना करने के लिए बैकुंठ से पृथ्वीलोक पर अवतरित हुआ हूँ। मैंने धर्म, अर्थ, काम आदि ३ धर्मग्रंथों की रचना की है। 'धर्म' नामक इस धर्मग्रंथ के सनातन धर्म, अवतार, आत्मा, परमेश्वर, आयाम, समय, स्थान, ऊर्जा आदि ८ खंड हैं। 'धर्म' नामक धर्मग्रंथ को लिखनेवाला मैं परमेश्वर नारायण का अवतार हूँ, किन्तु इसे लिखवानेवाले स्वयं परमेश्वर नारायण हैं। 'सनातन धर्म' नामक यह किताब 'धर्म' नामक धर्मग्रंथ का पहला खंड है।

'सनातन धर्म' नामक इस किताब में सनातन धर्म, धर्म के नियम, संस्कृति, धर्म प्रतीक, अर्थ, कर्मा, पाप-पुण्य, भक्ति, काम, जन्म-मृत्यु, अजर-अमर, मोक्ष, परमशांति आदि धार्मिक एवं आध्यात्मिक विषयों का परिपूर्ण ज्ञान मौजूद है। प्रत्येक मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करना अनिवार्य होता है। धर्म की पूर्ति करने के लिए धर्मज्ञान की आवश्यकता होती है। धर्मज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मनुष्य को इस 'सनातन धर्म' नामक किताब को अवश्य पढ़ना है।

लेखक : केडी खोत

॥ विषय सूची ॥

- १ सनातन धर्म
- २ सभ्यता एवं संस्कृति
- ३ संस्कृति के ८ तत्व
- ४ धर्म प्रतीक
- ५ अर्थ
- ६ कर्मा
- ७ पाप-पुण्य
- ८ भक्ति
- ९ आस्तिक-नास्तिक
- १० काम
- ११ जन्म-मृत्यु
- १२ अजर-अमर
- १३ मोक्ष
- १४ परमशांति

१. सनातन धर्म

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने अपने भीतर ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा आदि ४ निराकार ईश्वर की उत्पत्ति की है। मैंने ईश्वर दुर्गा द्वारा काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ३ निराकार ईश्वर की उत्पत्ति की है। मैं नारायण ईश्वर दुर्गा द्वारा मच्छ, कच्छ, गज, नारद आदि ४ अवतार को उत्पन्न करता रहता हूँ।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने ईश्वर शिव द्वारा शंकर भगवान को उत्पन्न किया है। मैंने ईश्वर ब्रह्म द्वारा दत्तात्रेय भगवान को उत्पन्न किया है। मैंने ईश्वर विष्णु द्वारा परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध आदि ४ भगवान को उत्पन्न किया है। मैंने स्वयं के अंश से कल्कि भगवान को उत्पन्न किया है।

मैंने आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि आदि ५ तत्वों से सम्पूर्ण प्रकृति की निर्मिति की है। मैंने शांति, समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ९ आयामों से ७ ब्रह्मांड एवं १ बैकुंठ की निर्मिति की है। मैंने अपने भीतर केंद्र में बैकुंठगर्भ की निर्मिति की है। सभी निराकार ईश्वर, साकार भगवान, मनुष्य, पशुप्राणि, पेड़पौधे, सम्पूर्ण प्रकृति, ब्रह्मांड, एवं बैकुंठ मेरे भीतर बैकुंठगर्भ में समाविष्ट हैं। मेरे भीतर मौजूद प्रत्येक कण मेरे नियमों के अधीन हैं। मैंने सभी निराकार ईश्वर को विभिन्न नियमों के तहत उत्पन्न किया है।

मैं नारायण परमेश्वर सभी मनुष्य, पशुप्राणि, पेड़पौधों को विभिन्न नियमों के तहत उत्पन्न करता हूँ। मैंने सम्पूर्ण प्रकृति की विभिन्न नियमों के तहत निर्मिति की है। मैंने सभी आयाम, ब्रह्मांड, एवं बैकुंठ की विभिन्न नियमों के तहत उत्पत्ति की है। सभी ब्रह्मांड मेरे नियमों को धारण करते हुए एक निश्चित गति एवं अंतर के सिद्धांत के अनुसार बैकुंठ के इर्दगिर्द घूमते रहते हैं। प्रकृति मेरे नियम को धारण करते हुए अपने स्वरूप में परिवर्तन करती रहती है। सभी आयाम मेरे नियमों को धारण करते हुए विभिन्न कार्य करते रहते हैं।

मेरे भीतर मौजूद सभी भौतिक पदार्थ एवं जीव शरीर प्रकृति एवं आयाम के विभिन्न तत्वों से निर्माण होते हैं। प्रकृति के प्रत्येक तत्व के विभिन्न नियम होते हैं, आयाम के प्रत्येक तत्व के विभिन्न नियम होते हैं, इस कारण सभी भौतिक पदार्थ एवं जीव शरीर का गुणधर्म भिन्न होता है। प्रकृति में मौजूद प्रत्येक भौतिक तत्व का अपना अलग गुणधर्म होता है। प्रकृति के आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि सभी तत्वों का गुणधर्म भिन्न होता है। प्रकृति में मौजूद प्रत्येक जीव का अपना अलग गुणधर्म होता है। पेड़पौधों, जीवजंतु, पशुप्राणि, पक्षी, मछली, आदि सभी जीव का अपना अलग गुणधर्म है।

पेड़पौधों, जीवजंतु, पशुप्राणि, पक्षी, मछली, आदि सभी जीव और नदी, पर्वत, पृथ्वी, चंद्र, सूर्य, ब्रह्मांड आदि सभी भौतिक पदार्थ का गुणधर्म भिन्न होता है, किन्तु सभी का गुणधर्म सनातन होता है। किसी भी भौतिक पदार्थ के गुणधर्म में बदलाव नहीं हो सकता है। किसी भी जीव के गुणधर्म में बदलाव नहीं हो सकता है। शुरू से अंत तक प्रत्येक जीव एवं भौतिक पदार्थ का गुणधर्म सनातन रहता है।

मेरे भीतर बैकुंठगर्भ में मौजूद सभी भौतिक पदार्थ, खगोलीय पिंड, प्रकृति, पेड़पौधे, जीवजंतु, पशुप्राणि, पक्षी, मछली आदि सभी भौतिक पदार्थ एवं जीव शरीर भोगी होते हैं। एकमात्र मनुष्य जीव कर्मी होते हैं। सभी भौतिक पदार्थ एवं जीव शरीर भोगी होने के कारण वे सभी प्रकृति के नियम एवं स्वयं के गुणधर्म को धारण करते हुए धर्म का पालन करते हैं। सभी भौतिक पदार्थ एवं जीव शरीर कर्मी नहीं होने के कारण वे कोई कर्म एवं अधर्म नहीं करते हैं, केवल अपने गुणधर्म के अनुकूल अपने जीवन को भोगते हैं।

मैं नारायण परमेश्वर मनुष्य को स्वयं के अनुसार कर्म करने की स्वतंत्रता देता हूँ। मनुष्य को स्वतंत्रतापूर्वक कर्म करने की सुविधा प्राप्त होने के कारण मनुष्य विभिन्न प्रकार के कर्म करता है। कुछ कर्म धर्म के अनुकूल करता है, तो कुछ कर्म धर्म के विपरीत करता है।

मनुष्य के सद्गुण एवं दुर्गुण आदि २ प्रकार के विभिन्न गुणधर्म होते हैं। मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि ८ प्रमुख सद्गुण होते हैं। काम, क्रोध, लोभ, लत, अहंकार, भय, ईर्ष्या, क्रूरता आदि ८ प्रमुख दुर्गुण होते हैं। मनुष्य को अपने भीतर मौजूद सद्गुणों को धारण करना धर्म होता है, और अपने भीतर मौजूद दुर्गुण को धारण करना अधर्म होता है। मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए और अपने जीवन को आनंदमय बनाने के लिए धर्म और अधर्म दोनों का ज्ञान होना अति आवश्यक होता है।

मनुष्य को सनातन धर्म का ज्ञान देने मैं नारायण परमेश्वर निराकार ईश्वर ब्रह्म, विष्णु, शिव द्वारा शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध आदि साकार भगवान को बैकुंठ से पृथ्वीलोक पर प्राचीन, मध्य, आधुनिक आदि ३ काल के प्रत्येक युग में अवतरित करता रहता हूँ। मैं नारायण परमेश्वर स्वयं के सूक्ष्म अंश भगवान कल्कि को बैकुंठ से पृथ्वी पर प्रत्येक पर्व के अंतिम कलयुग में अवतरित करता रहता हूँ।

सनातन धर्म

परमेश्वर द्वारा प्रकृति के ५ तत्व और दुर्गा के ३ तत्व कुल ८ तत्वों से मनुष्य उत्पन्न हुआ है। सनातन काल तक प्रकृति, दुर्गा एवं परमेश्वर के विभिन्न तत्वों के सभी नियमों के तहत सद्गुणों को धारण करते हुए कर्म करते रहना, मनुष्य का सनातन धर्म है। प्रकृति में मौजूद सभी भौतिक पदार्थ, विभिन्न जीव एवं मनुष्य का धर्म सनातन है। प्रत्येक मनुष्य को सनातन धर्म का पालन करते हुए अपने कर्म करते रहना है।

पृथ्वीलोक एक कर्मभूमि है। पृथ्वी पर जन्में प्रत्येक मनुष्य को कर्म करना अनिवार्य होता है। मनुष्य को अपने अस्तित्व को जानने, अपने जन्म का कारण जानने, अपने कर्म को जानने, परमेश्वर को जानने, आदि आध्यात्मिक ज्ञान पाने के लिए सनातन धर्म की शिक्षा लेना अनिवार्य होता है।

प्रकृति के भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि ५ तत्व होते हैं। दुर्गा के आत्मा, मन, प्राण आदि ३ तत्व होते हैं। आत्मा के मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि ८ संस्कार होते हैं। मन के शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद आदि ८ संस्कार होते हैं। प्राण के शौच, स्नान, पानी, व्यायाम, ध्यान, भोजन, नींद, काम आदि ८ संस्कार होते हैं। परमेश्वर का १ तत्व मोक्ष होता है।

मनुष्य को सनातन धर्म के ३० नियमों को धारण करते हुए कर्म करते रहना है।

★ प्रकृति : भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश

१ भूमि : घर, परिसर, गाँव, नगर, शहर, राज्य, देश, खंड आदि सभी भूमि को साफ सुथरा रखना, मनुष्य का धर्म है।

२ जल : नदी, नाला, तालाब, कुआं, सरोवर, समुद्र आदि सभी जल को साफ सुथरा रखना, मनुष्य का धर्म है।

३ अग्नि : प्रकृति में मौजूद सभी ज्वलनशील पदार्थों का सुरक्षित संचालन करना और नवनवीन ज्वलनशील पदार्थों की खोज करते रहना, मनुष्य का धर्म है।

४ वायु : पृथ्वी के वातावरण में मौजूद प्राणवायु की शुद्धता बरकरार रखने के लिए अपने परिसर में अनेकों वृक्ष लगाना एवं जंगल का संचयन करना, मनुष्य का धर्म है।

५ आकाश : आकाश में मौजूद सूर्य, तारे, नक्षत्र आदि प्रकाशीय खगोलीय पिंडों का अध्ययन करते हुए दिन, वार, महीना, वर्ष, युग, काल, पर्व आदि की कालगणना का संचालन करते रहना, मनुष्य का धर्म है।

★ दुर्गा : आत्मा, मन, प्राण

• आत्मा : मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति

६ मुक्ति : प्रकृति एवं माया के बंधन आकर्षक एवं आसक्ति से मुक्त होने का प्रयास करते रहना, मनुष्य का धर्म है।

७ आनंद : विश्व के सभी मनुष्यों को आनंद की अनुभूति देना, और स्वयं भी आनंद की अनुभूति करना, मनुष्य का धर्म है।

८ ज्ञान : आजीवन भौतिक एवं आध्यात्मिक, किसी न किसी विषय का निरंतर ज्ञान लेते रहना, मनुष्य का धर्म है।

९ शांति : एकांत में शारिरिक एवं मानसिक मौन धारण करते हुए शांति की अनुभूति करना, मनुष्य का धर्म है।

१० सुख : विश्व के सभी मनुष्यों को सुख की अनुभूति देना, और स्वयं भी सुख की अनुभूति करना, मनुष्य का धर्म है।

११ प्रेम : विश्व के सभी मनुष्यों, पशुप्राणियों, पेड़पौधों, आदि से प्रेम करना, मनुष्य का धर्म है।

१२ पवित्रता : मन में उत्पन्न होने वाले विभिन्न भाव एवं विचारों को अपनी वाणी और कर्म से प्रकट करते हुए पवित्रता प्राप्त करना, मनुष्य का धर्म है।

१३ शक्ति : काम, क्रोध, लोभ, लत आदि ४ भावों को नियंत्रित करते हुए मन में संयम एवं शक्ति उत्पन्न करना, मनुष्य का धर्म है।

• मन : शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद

१४ शून्य : वर्तमान स्थिति के अनुसार मन की शून्य अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।

- १५ चेतन : वर्तमान स्थिति के अनुसार मन की चेतन अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।
- १६ अर्धचेतन : वर्तमान स्थिति के अनुसार मन की अर्धचेतन अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।
- १७ अवचेतन : वर्तमान स्थिति के अनुसार मन की अवचेतन अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।
- १८ भावना : वर्तमान स्थिति के अनुसार मन में उत्पन्न होने वाली सभी भावनाओं को साक्षी भाव से जानना, मनुष्य का धर्म है।
- १९ रचना : नवनवीन भौतिक विषयों की रचना करते हुए अपने मन की रचना अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।
- २० स्वभाव : अपने मूल स्वभाव को जानना, एवं अपने स्वभाव के अनुकूल व्यवहार करना, मनुष्य का धर्म है।
- २१ अर्धनारद : मनुष्य को अपने मन में उत्पन्न होने वाले काम, क्रोध, लोभ, लत आदि ४ भावों पर पूर्णतः नियंत्रण पाकर अपने मन की अर्धनारद अवस्था नियंत्रित करना, मनुष्य का धर्म है।
- प्राण : शौच, स्नान, पानी, व्यायाम, ध्यान, भोजन, नींद, काम
- २२ शौच : शौच के वेग को नियंत्रित नहीं करते हुए उचित समय पर शौच करना, मनुष्य का धर्म है।
- २३ स्नान : अपने शरीर को स्वच्छ रखने के लिए नियमित स्नान करना, मनुष्य का धर्म है।
- २४ पानी : अपने शरीर के जल तत्व के प्रमाण को संतुलित रखने के लिए नियमित पानी पीते रहना, मनुष्य का धर्म है।
- २५ व्यायाम : अपने शरीर को मजबूत एवं कार्यशील बनाए रखने के लिए नियमित व्यायाम करना, मनुष्य का धर्म है।
- २६ ध्यान : वर्तमान स्थिति से जुड़ने और आत्मज्ञान प्राप्त करने के लिए नियमित ध्यानसाधना करना, मनुष्य का धर्म है।

२७ भोजन : अपनी प्राण ऊर्जा बढ़ाने के लिए सूर्योदय के बाद एवं सूर्यास्त के पहले शाकाहारी अथवा मांसाहारी पर्याप्त मात्रा में भोजन करना, मनुष्य का धर्म है।

२८ नींद : अपनी पिंडऊर्जा को स्वस्थ रखने के लिए पर्याप्त नींद लेना, मनुष्य का धर्म है।

२९ काम : कामतृप्ति की प्राप्ति के लिए परिपूर्ण कामभोग करते रहना, मनुष्य का धर्म है।

★ परमेश्वर : मोक्ष

३० मोक्ष : धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करना, मनुष्य का परमधर्म है।

मनुष्य के लिए धर्म का ज्ञान होना जितना महत्वपूर्ण होता है, उतना ही महत्वपूर्ण अधर्म का ज्ञान भी होता है। जब मनुष्य केवल धर्म का ज्ञान प्राप्त करता है, तब मनुष्य धर्म एवं अधर्म दोनों प्रकार के कर्म करता है। मनुष्य अज्ञानता में कोई अधर्म ना करें, इसलिए मनुष्य को धर्म एवं अधर्म दोनों का ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य होता है।

मनुष्य को निम्नलिखित अधर्म एवं कुकर्म नहीं करने होते हैं।

१ घर, परिसर, गाँव, शहर, राज्य, देश, खंड आदि किसी भी स्थान पर कूड़ा-कचरा फेंककर गंदगी करना अधर्म है।

२ नाला, नदी, कुंआ, तालाब, सरोवर, समुद्र आदि किसी भी जल में कूड़ा-कचरा डालना अधर्म है।

३ ज्वलनशील पदार्थों का असुरक्षित संचयन करना अधर्म है।

४ स्वयं को आनंदित करने के लिए किसी अन्य मनुष्य का आनंद छीनना अधर्म है।

५ भौतिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान से वंचित रहना अधर्म है।

६ स्वयं को सुख दिलाने के लिए किसी अन्य मनुष्य का सुख छीनना अधर्म है।

७ प्रेम करने के बजाय प्रेम पाने की इच्छा करना अधर्म है।

८ अपने स्वभाव के विपरीत व्यवहार करना अधर्म है।

९ अपने जीवनसाथी, परिवार, मित्र, शिष्य, सहायक, सेवक एवं अन्य किसी भी मनुष्य पर अपना अधिकार जमाना अधर्म है।

१० किसी अन्य मनुष्य की धन-संपत्ति पर अपना अधिकार जमाना अधर्म है।

११ अपनी कामवासनाओं की पूर्ति के लिए किसी अन्य मनुष्य के साथ अनैतिक संबंध स्थापित करना अधर्म है।

१२ अत्यधिक धन-संपत्ति जमा करने का लालच रखना अधर्म है।

१३ अपने लाभ के लिए किसी अन्य मनुष्य को आर्थिक एवं शारीरिक हानि पहुंचाना अधर्म है।

१४ अपने लाभ के लिए किसी अन्य मनुष्य एवं अभोजनीय पशु या प्राणी की हत्या करना अधर्म है।

१५ आत्महत्या करना अधर्म है।

१६ अन्य मनुष्य की धन-संपत्ति को चुराना एवं छीनना अधर्म है।

१७ अन्य मनुष्य के कर्म को चुराना एवं छीनना अधर्म है।

१८ चोर, लुटेरे, खूनी, बलात्कारी, भ्रष्टाचारी, देशद्रोही आदि शैतानों को कुकर्म करने के लिए शारिरिक एवं आर्थिक सहयोग देना अधर्म है।

१९ अपनी किसी भी लत का पोषण करना अधर्म है।

२० नियमित स्नान नहीं करना अधर्म है।

२१ नियमित व्यायाम नहीं करना अधर्म है।

२२ भूखा प्यासा रहकर अपने शरीर को पीड़ा पहुंचाना और अपनी प्राणरुर्जा को कमजोर करना, अधर्म है।

२३ मछली, केकड़े, मुर्गा, बक, बकरा आदि भोजनीय जीव के अलावा किसी अन्य पशुपक्षी को भोजन के रूप में ग्रहण करना अधर्म है।

२४ अन्याय, असत्य, एवं अधर्म का विरोध नहीं करना अधर्म है।

२५ धन, भोजन, कर्म, सम्मान, प्रेम, आदि किसी भी विषयों के लिए भीख मांगना अधर्म है।

२६ अपने स्वार्थ के लिए संस्कृति एवं समाज में कुकर्म रीतिरिवाजों को जोड़ना, अधर्म है।

२७ रंगरूप, व्यवसाय, संस्कृति, सभ्यता, भाषा, देश आदि विभिन्नता के आधार पर अन्य मनुष्य के साथ भेदभाव करना, अधर्म है।

२८ भगवान, देवी-देवता, संत, गुरु, माता-पिता, मित्र-परिवार, एवं सफल मनुष्य आदि किसी के भी जीवन का अनुकरण करना, अधर्म है।

२९ धर्म, अर्थ, काम संबंधित अपने कर्तव्य का पालन न करना अधर्म है।

३० शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि ७ साकार भगवान और ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ७ निराकार ईश्वर और एकमात्र परमेश्वर नारायण इनके अलावा किसी अन्य देवी-देवता, शैतान-चुड़ैल, एवं शासक-गुरु आदि मनुष्य को भगवान, ईश्वर, परमेश्वर मानना अधर्म है।

धर्म और अधर्म दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं, फिर भी, धर्म का पालन करने वाला मनुष्य अज्ञानता में अधर्म कर सकता है। मनुष्य सदैव सनातन धर्म का पालन करें और अधर्म से दूर रहें, इसलिए मनुष्य को धर्म और अधर्म दोनों विषयों का ज्ञान होना अति आवश्यक होता है।

पृथ्वी पर मनुष्य का जीवन एक माया एवं मिथ्या है। मनुष्य जिस शरीर को स्वयं समझने की चेष्टा करता है, वह शरीर प्रकृति एवं माया द्वारा निर्मित मिथ्या है। मनुष्य का सत्य उसका मन है। मनुष्य के मन को पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर अपने ७ जन्मों का जीवनकाल पूरा करके बैकुंठ में परमसत्य जीवन प्राप्त करना होता है।

मनुष्य का सत्य जीवन बैकुंठ में होता है। मनुष्य को अपना सत्य जीवन प्राप्त करने के लिए मोक्ष की प्राप्ति करना और अपने मन को पुण्यवान बनाना होता है। मनुष्य के मन को पृथ्वी पर मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि आत्मा के ८ संस्कारों की अनुभूति होने पर पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को अत्याधिक पुण्य प्राप्त करने के लिए मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि ८ भावों की अत्यधिक अनुभूति लेने का प्रयास करना होता है।

मनुष्य के मन को एक ग्रहलोक से दूसरे ग्रहलोक जाने के लिए मोक्ष की प्राप्ति करना अनिवार्य होता है। मनुष्य को मोक्ष प्राप्त करने के लिए अनेकों बार जन्ममृत्यु के चक्र से गुजरना पड़ता है। जो मनुष्य

सनातन धर्म के सभी नियमों का पालन करते हुए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करता है, उसी मनुष्य के मन को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

जब मनुष्य के मन को पृथ्वीलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर स्वर्गलोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का पहला जीवनकाल समाप्त होता है और दूसरा जीवनकाल शुरू होता है। जब मनुष्य के मन को स्वर्गलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर प्रीतिलोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का दूसरा जीवनकाल समाप्त होता है और तीसरा जीवनकाल शुरू होता है। जब मनुष्य के मन को प्रीतिलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर रसलोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का तीसरा जीवनकाल समाप्त होता है और चौथा जीवनकाल शुरू होता है।

जब मनुष्य के मन को रसलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर स्तब्धलोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का चौथा जीवनकाल समाप्त होता है और पांचवा जीवनकाल शुरू होता है। जब मनुष्य के मन को स्तब्धलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर प्रज्ञालोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का पांचवा जीवनकाल समाप्त होता है और छटवां जीवनकाल शुरू होता है। जब मनुष्य के मन को प्रज्ञालोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर प्रभुलोक पर स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का छटवां जीवनकाल समाप्त होता है और सातवां जीवनकाल शुरू होता है।

जब मनुष्य के मन को प्रभुलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होकर बैकुंठ में स्थान प्राप्त होता है, तब मनुष्य का सातवां जीवनकाल समाप्त होता है। मनुष्य के मन को बैकुंठ में अपना मूल सत्य अस्तित्व प्राप्त होता है। मनुष्य को बैकुंठ परमसत्य जगत में जीवन पाने के लिए पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर अपने ७ जन्मों का चक्र पूरा करना पड़ता है।

पृथ्वीलोक पर सभी मनुष्य अपने प्रथम जीवनकाल को जीते हैं। पृथ्वीलोक पर किसी भी मनुष्य का अस्तित्व सत्य नहीं है। इसलिए मनुष्य को प्रकृति एवं माया द्वारा रचित किसी भी भौतिक विषयों के प्रति आसक्ति नहीं रखनी है। मनुष्य को अपने मिथ्या अस्तित्व एवं चरित्र के प्रति आसक्ति नहीं रखनी है।

धर्म, अर्थ, काम के सभी नियमों को धारण करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करना मनुष्य के जीवन का प्रमुख उद्देश्य होता है। मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि ८ भावों की अत्यधिक अनुभूति लेकर अपने मन को पुण्यवान बनाना मनुष्य का प्रमुख कर्तव्य होता है।

२. सभ्यता एवं संस्कृति

पृथ्वीलोक एवं अन्य सभी ग्रहलोक पर मनुष्य एक सामाजिक जीव है। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन परिवार एवं समाज पर आधारित होता है। एक अकेले मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं होता है। कुछ मनुष्य आजीवन अपने परिवार के साथ रहते हुए वर्तमान सभ्यता एवं संस्कृति का पालन करते हैं।

कुछ मनुष्य अपने परिवार से दूर रहते हुए वर्तमान सभ्यता एवं संस्कृति का पालन करते हैं। मनुष्य परिवार से दूर रह सकता है, किन्तु समाज एवं संस्कृति से कभी भी दूर नहीं रह सकता है। मनुष्य को आजीवन वैयक्तिक एवं सामाजिक कर्तव्यों का पालन करते हुए समाज एवं संस्कृति के साथ रहना ही पड़ता है।

मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन परिवार एवं समाज से जुड़ा हुआ होता है। मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करने के लिए परिवार, समाज एवं संस्कृति की आवश्यकता होती है। मनुष्य अपने परिवार एवं समाज से घनिष्ठ संबंध बनाने के लिए सभ्यता एवं संस्कृति का पालन करता है।

एकसमान कार्य करने वाले मनुष्यों को एकत्रित होने के लिए समाज के नियम एवं कर्तव्य का पालन करना होता है। अनेकों समाज को एकत्रित होने के लिए संस्कृति के नियम एवं कर्तव्य का पालन करना होता है। अनेकों संस्कृति को एकत्रित होने के लिए सनातन धर्म के नियम एवं कर्तव्य का पालन करना होता है।

मनुष्य की शारिरिक एवं मानसिक रूप से सैकड़ों जरूरतें होती हैं। मनुष्य की अन्न, वस्त्र, निवास, इलाज, काम आदि ५ मूलभूत शारिरिक जरूरतें होती हैं। मनुष्य की अन्न, वस्त्र, निवास आदि ३ दैनंदिन अति आवश्यक जरूरतें होती हैं। मनुष्य की शारिरिक एवं मानसिक जरूरतों को पूरा करने वाले भौतिक संसाधनों को सभ्यता कहते हैं।

जो मनुष्य अपनी मूलभूत शारीरिक जरूरतों की पूर्ति करता है, ऐसे मनुष्य को सभ्य मनुष्य कहते हैं। जो मनुष्य अपनी मूलभूत शारिरिक जरूरतों की पूर्ति नहीं करता है, ऐसे मनुष्य को असभ्य मनुष्य कहते हैं।

ताजा भोजन करना, अन्न, अन्नदाता एवं आचारी का सम्मान करना, साफ-स्वच्छ वस्त्र पहनना, अपने घर, परिसर को साफ-स्वच्छ रखना, साफ-सुथरे स्थान पर घर बसेरा करना, अपने शरीर के विकारों का इलाज कराना, अपनी कामवासना पर नियंत्रण पाना आदि सभ्य मनुष्य की पहचान होती है।

बासी भोजन करना, अन्न का अपमान करना, अन्नदाता एवं आचारी का अपमान करना, गंदे-मैले वस्त्र पहनना, निर्वस्त्र रहना, अपने घर, परिसर को गंदा रखना, गंदे, बदबूदार स्थान पर घर बसेरा करना, अपने शरीर के विकारों का इलाज नहीं करना, अपनी कामवासना से अनियंत्रित होना आदि असभ्य मनुष्य की पहचान होती है।

प्रकृति में मौजूद सभी भौतिक संसाधनों को विशेष विधि के अनुसार उपभोग करने की कला, समाज को एकजुट करने की कला, और अन्य सभी कलाओं के समूह को संस्कृति कहते हैं। सम्पूर्ण विश्व में सभ्यता एकसमान होती है, किन्तु प्रत्येक घर, गाँव, शहर, राज्य, देश आदि विभिन्न क्षेत्रों में सभ्यता एवं भौतिक संसाधनों का उपभोग लेने की कला एवं संस्कृति भिन्न भिन्न होती है।

मनुष्य को परमेश्वर से जुड़ने के लिए सनातन धर्म का पालन करना होता है, और परिवार एवं समाज से जुड़ने के लिए सभ्यता एवं संस्कृति का पालन करना होता है। सनातन धर्म मनुष्य को परमेश्वर से जोड़े रखता है। सभ्यता एवं संस्कृति मनुष्य को परिवार एवं समाज से जोड़े रखती है।

सभ्यता केवल भौतिक संसाधनों से जुड़ी होती है। समय समय पर नवनवीन भौतिक संसाधनों के निर्माण के साथ पुरानी सभ्यता का अंत होता है, और नई सभ्यता का उदय होता है। मनुष्य को पुरानी सभ्यता के साथ नई सभ्यता को भी स्वीकार करना होता है। जो मनुष्य नई सभ्यता को स्वीकार नहीं करता है, ऐसा मनुष्य जीवन में उन्नति नहीं कर पाता है।

संस्कृति भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों विषयों से जुड़ी होती है। संस्कृति के संस्कार, नृत्य, संगीत, भाषा, आहार, वेशभूषा, उत्सव, वास्तु आदि ८ तत्व होते हैं। भौतिक संसाधनों एवं सभ्यता का इस्तेमाल करते हुए संस्कृति की रचना की जाती है। समाज में सनातन धर्म का प्रचार करना संस्कृति का मुख्य उद्देश्य होता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने प्रकृति के भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश आदि ५ तत्व और ईश्वर दुर्गा के आत्मा, मन, प्राण आदि ३ तत्व कुल ८ विभिन्न तत्वों से मनुष्य एवं धर्म की रचना की है। मनुष्य के शरीर की रचना एवं धर्म के नियम सनातन है।

जिस प्रकार मनुष्य की आध्यात्मिक एवं भौतिक शरीर रचना में बदलाव नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार धर्म के नियमों में बदलाव नहीं किया जा सकता है। प्रत्येक भौतिक पदार्थ, पशुपक्षी, एवं मनुष्य के लिए उनका अपना धर्म सदैव सनातन रहता है। सनातन काल तक धर्म के नियम समान रहते हैं, इसलिए धर्म को सनातन धर्म कहते हैं।

मैं नारायण परमेश्वर मनुष्य को सभ्यता एवं संस्कृति की रचना करने की स्वतंत्रता देता हूँ। मनुष्य को अपने जीवन को सुविधाजनक एवं सुखद बनाने के लिए भौतिक संसाधनों की निर्मिति करते हुए नवनवीन सभ्यता की रचना करनी होती है। मनुष्य को भौतिक संसाधनों का उपयोग करते हुए संस्कार, नृत्य, संगीत, भाषा, आहार, वेशभूषा, उत्सव, वस्तु आदि ८ कलाओं से परिपूर्ण संस्कृति की रचना करनी होती है। मनुष्य को संस्कृति की रचना करने की स्वतंत्रता मिलने के कारण देवी-देवता, शैतान, चुड़ैल, सज्जन, दुर्जन आदि सभी मनुष्य मिलकर एक विशेष समाज एवं संस्कृति की रचना करते हैं।

देवी, देवता, एवं सज्जन आदि धर्म का प्रचार करने के लिए संस्कृति में सुसंस्कार एवं कीर्तन की रचना करते हैं। शैतान, चुड़ैल, एवं दुर्जन आदि अधर्म का प्रचार करने के लिए संस्कृति में तुच्छ रीतिरिवाज मूर्तिपूजा, एवं कर्मकांड की रचना करते हैं। कुछ शैतान अधर्म करने के लिए मानवनिर्मित संस्कृति को ही अलग धर्म बनाने की चेष्टा करते हैं।

जो मनुष्य स्वयं भी सुखी रहता है और अन्य मनुष्य को भी सुख देता है, ऐसे मनुष्य को सज्जन कहते हैं। जो मनुष्य स्वयं सुख भोगने के लिए अन्य मनुष्य को दुख देता है, ऐसे मनुष्य को दुर्जन कहते हैं। जो पुरुष एक विशेष पंथ, सम्प्रदाय के सभी मनुष्यों को एकजुट करते हुए समाज एवं संस्कृति की रचना करता है, जो पुरुष समाज कल्याण के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित करता है, जो पुरुष सनातन धर्म की पुनर्स्थापना के लिए भगवान के कार्य में योगदान देता है, ऐसे पुरुष को देवता कहते हैं। जो स्त्री एक विशेष पंथ, सम्प्रदाय के सभी मनुष्यों को एकजुट करते हुए समाज एवं संस्कृति की रचना करती है, जो स्त्री समाज कल्याण के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित करती है, जो स्त्री सनातन धर्म की पुनर्स्थापना के लिए भगवान के कार्य में योगदान देती है, ऐसी स्त्री को देवी कहते हैं।

जो किन्नर एवं हिजड़ा एक विशेष पंथ, सम्प्रदाय के सभी मनुष्यों को एकजुट करते हुए समाज एवं संस्कृति की रचना करते हैं, जो किन्नर एवं हिजड़ा समाज कल्याण के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित करते हैं, जो किन्नर एवं हिजड़ा सनातन धर्म की पुनर्स्थापना के लिए भगवान के कार्य में योगदान देते हैं, ऐसे किन्नर एवं हिजड़ा को गंधर्व कहते हैं।

जो पुरुष एक विशेष पंथ, सम्प्रदाय के सभी मनुष्यों को सताने एवं गुलाम बनाने के लिए समाज एवं संस्कृति में हस्तक्षेप करते हुए तुच्छ रीतिरिवाज, मूर्तिपूजा एवं कर्मकांड की रचना करता है, समाज को अधर्म करने के लिए प्रेरित करता है, ऐसे पुरुष को शैतान कहते हैं। जो स्त्री एक विशेष पंथ, सम्प्रदाय के सभी मनुष्यों को सताने एवं गुमराह करने के लिए समाज एवं संस्कृति में हस्तक्षेप करते हुए तुच्छ रीतिरिवाज, मूर्तिपूजा एवं कर्मकांड की रचना करती है, अधर्म एवं कर्मकांड का प्रचार करती है, ऐसी स्त्री को चुड़ैल कहते हैं।

मनुष्य को जानना आवश्यक है कि धर्म परमेश्वर द्वारा रचित होता है, और संस्कृति देवी, देवता, गंधर्व, शैतान, चुड़ैल, सज्जन, दुर्जन आदि मनुष्य द्वारा रचित होती है। अगर कोई संस्कृति धर्म के विपरीत होती है, मनुष्य को उस संस्कृति का त्याग करना होता है। मनुष्य किसी संस्कृति का पालन करें अथवा ना करें, किन्तु सनातन धर्म का पालन करना प्रत्येक मनुष्य को अनिवार्य होता है।

सभ्यता एवं संस्कृति सनातन नहीं होती है। समय समय पर सभ्यता में बदलाव एवं उन्नति होती रहती है। सभ्यता में बदलाव एवं उन्नति के कारण नवनवीन सभ्यता का उदय होता रहता है। सदैव नई सभ्यता पुरानी सभ्यता से अधिक बेहतर होती है, जिसके कारण पुरानी सभ्यता का अंत होता है और नई सभ्यता की शुरुआत होती है। संस्कृति मुख्यतः सभ्यता पर आधारित होती है। सभ्यता का उपभोग करने की कला संस्कृति होती है। जब किसी सभ्यता का अंत होता है, तब उस सभ्यता से जुड़ी संस्कृति का भी अंत हो जाता है। गाँव, शहर, राज्य, देश आदि विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न सभ्यता एवं संसाधन उपलब्ध होते हैं।

मनुष्य अपने समाज एवं नजदीकी क्षेत्र में उपलब्ध सभ्यता एवं संसाधनों का उपभोग करते हुए संस्कृति की रचना करता है। प्रत्येक भिन्न समाज एवं क्षेत्र में भिन्न भिन्न प्रकार की सभ्यता एवं संसाधन उपलब्ध होने के कारण प्रत्येक भिन्न समाज एवं क्षेत्र में भिन्न भिन्न प्रकार की संस्कृति होती है। विश्व के सभी मनुष्य का एक सनातन धर्म होता है, किन्तु सभी मनुष्य की कोई एक विशेष संस्कृति नहीं होती है।

मनुष्य को सनातन धर्म का प्रचार करने वाली सभी भिन्न भिन्न प्रकार की संस्कृति का सम्मान करना होता है, किन्तु कामवासना, क्रोध, भय, भ्रम, अशांति, अहंकार, हिंसा, लालच, नशा, कर्मकांड आदि अधर्म का प्रचार करने वाली संस्कृति का त्याग एवं बहिष्कार करना होता है।

३. संस्कृति के ८ तत्व

पृथ्वीलोक पर हजारों भिन्न संस्कृतियां होती हैं। कुछ संस्कृतियां विस्तारवादी होती हैं, कुछ संस्कृतियां स्थायी होती हैं। विस्तारवादी संस्कृति में अधिकतम शैतानों का हस्तक्षेप होता है। विस्तारवादी संस्कृति का स्वीकार करना शैतानों की गुलामी स्वीकारने के समान होता है।

विस्तारवादी संस्कृति का समाज अन्य संस्कृति के समाज को जोरजबरदस्ती, छलकपट, हिंसा आदि अधर्म करते हुए विस्तारवादी संस्कृति में शामिल करने का प्रयास करते रहते हैं। स्थायी संस्कृति का समाज अन्य संस्कृति के समाज को अपनी स्थायी संस्कृति में शामिल नहीं करते हैं।

विस्तारवादी एवं स्थायी संस्कृति आदि सभी संस्कृति के ८ तत्व होते हैं। संस्कार, नृत्य, संगीत, भाषा, आहार, वेशभूषा, उत्सव, वास्तु आदि ८ तत्वों से परिपूर्ण संस्कृति का निर्माण होता है। किसी भी संस्कृति का पवित्र अथवा अपवित्र होना, संस्कृति के सभी ८ तत्वों की गुणवत्ता पर निर्भर करता है।

१ संस्कार

संस्कार : सभी संस्कृति का प्रमुख तत्व संस्कार होता है। अभौतिक संस्कार और भौतिक संस्कार आदि २ प्रकार के संस्कार होते हैं। अभौतिक संस्कार को नित्य-कर्तव्य कहते हैं, और भौतिक संस्कार को रीतिरिवाज कहते हैं। सभी नित्य-कर्तव्य संस्कृति में पवित्रता को बढ़ाते हैं, किन्तु कुछ रीतिरिवाज संस्कृति में अपवित्रता को बढ़ाते हैं।

मनुष्य आजीवन सभी नित्य-कर्तव्य का पालन कर सकता है, किन्तु मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए शैतानों द्वारा रचित तुच्छ रीतिरिवाजों का त्याग करना अनिवार्य होता है। रीतिरिवाज प्रकृति एवं माया में बंधे रहने के लिए बनाए जाते हैं। शैतान एवं चुड़ैल अधर्म करने एवं समाज को गुलाम बनाने के लिए अनेकों अभद्र रीतिरिवाजों की रचना करते हैं।

नित्य-कर्तव्य मनुष्य को सज्जन बनाते हैं, रीतिरिवाज मनुष्य को दुर्जन बनाते हैं। किसी भी रीतिरिवाज का धर्म से कोई संबंध नहीं होता है, बल्कि कुछ रीतिरिवाज मनुष्य से अधर्म करने के लिए शैतान एवं चुड़ैल द्वारा रचे जाते हैं। कुछ अभद्र रीतिरिवाजों का पालन करने वाले मनुष्य कीड़ेमकोड़े के समान होते हैं, ऐसे मनुष्य कभी मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर सकते हैं।

कुछ रीतिरिवाज मनुष्य से अधर्म करवाते हैं, इसी कारण, मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति में रीतिरिवाज बहुत बड़ी बाधा होती है। मनुष्य को किसी भी रीतिरिवाजों का पालन करने से पूर्व रीतिरिवाज देवता अथवा शैतान किसने बनाया है, यह जानना अति आवश्यक होता है।

जिन रीतिरिवाजों से धर्म का पालन होता है, पुण्य की प्राप्ति होती है, ऐसे रीतिरिवाज देवी-देवता द्वारा रचे जाते हैं। जिन रीतिरिवाजों से अधर्म किया जाता है, पाप की प्राप्ति होती है, ऐसे रीतिरिवाज शैतानों द्वारा रचे जाते हैं। मनुष्य को केवल देवी-देवताओं द्वारा बनाए गए रीतिरिवाज का पालन करना है, और शैतानों द्वारा बनाए गए रीतिरिवाज का बहिष्कार करना है।

जो मनुष्य देवता, शैतान, धर्म, अधर्म, पाप, पुण्य आदि किसी का भी भेद नहीं जान पाता है, ऐसे मनुष्य को किसी भी प्रकार के रीतिरिवाजों का पालन नहीं करना होता है। बिना ज्ञान के किसी भी रीतिरिवाजों का पालन करना, अकर्म एवं अधर्म के समान होता है।

मनुष्य अपने समाज एवं संस्कृति का उद्धार करने निम्नलिखित नित्य-कर्तव्य का पालन कर सकते हैं।

अभिवादन : नमस्ते मुद्रा में अपने दोनों हाथ जोड़कर स्वयं से अधिक उम्र एवं ज्ञानी मनुष्य का अभिवादन करना है। एक दूसरे से हाथ मिलाकर अपने मित्र-परिवार का अभिवादन करना है। एक दूसरे से गले लगकर अपने जीवनसाथी एवं प्रियजन का अभिवादन करना है।

नमस्कार : अपने माता-पिता एवं गुरु के चरण स्पर्श करते हुए नमस्कार करना है। मनुष्य को अपने माता-पिता एवं गुरु के अलावा किसी अन्य मनुष्य के चरण स्पर्श करते हुए नमस्कार नहीं करना है।

सम्मान : अपने संपर्क में आए सभी अच्छे मनुष्यों का सम्मान करना है। बुरे मनुष्यों से दूरी बनाए रखनी है।

आभार : ज्ञान, आनंद, सुख, प्रेम, शांति, आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति दिलाने वाले सभी मनुष्यों का आभार एवम् कृतज्ञता व्यक्त करना है।

अभिनंदन : अच्छे कार्य में सफलता प्राप्त करने वाले प्रत्येक मनुष्य का अभिनंदन करना है।

प्रशंसा : अच्छे कार्य को खूबसूरती से करने वाले मनुष्य की प्रशंसा करनी है।

मदद: मुसीबत में फसे मनुष्य एवं अन्य जीव की मदद करनी है।

शांति : विद्यालय, कार्यालय, मंदिर आदि स्थानों पर शांति बनाए रखनी है।

कीर्तन : धर्म एवं संस्कृति का ज्ञान निरंतर प्राप्त करने के लिए सत्संग एवं कीर्तन में नियमित सम्मिलित होना है।

दान : समाज, देश, विश्व के कल्याण के लिए नियमित श्रमदान, धनदान, धान्यदान, आदि विभिन्न दान करते रहना है।

सेवा : बीमार, गुरु, माता-पिता, मित्र-परिवार, समाज, देश आदि मनुष्य एवं भगवान की सेवा करनी है।

ज्ञान : स्वयं अपनी संस्कृति एवं समाज का ज्ञान प्राप्त करना है और अपने बच्चों को भी अपनी संस्कृति एवं समाज का ज्ञान देना है।

इच्छा-मृत्यु : अत्यधिक बीमार परिजन को इच्छा-मृत्यु दिलानी है।

धन : अपनी शारिरिक एवं मानसिक जरूरतों की पूर्ति के लिए उचित कर्म करते हुए नियमित धन कमाते रहना है।

सत्संग : समाज में सनातन धर्म एवं संस्कृति का प्रचार करने के लिए नियमित सत्संग का आयोजन करते रहना है।

सत्य : मनुष्य को सत्य का स्वीकार करना है।

अहिंसा : अहिंसा सुरक्षाकवच के समान होती है, मनुष्य को शारिरिक एवं मानसिक हानि से बचने के लिए सदैव अहिंसा का पालन करना है।

हिंसा : चोर, लुटेरे, खूनी, बलात्कारी, देशद्रोही, आतंकवादी आदि अधर्म करने वाले अपराधियों एवं शैतानों को दंड देने के लिए एक जिम्मेदार शासक एवं धर्मरक्षक को अवश्य हिंसा करनी है।

अथिति : अपने घर आए अतिथि को भोजन-पानी कराना है।

सत्कार : समाज, देश, विश्व में अच्छे कार्य करने वाले मनुष्यों का सत्कार करना है।

मनुष्य अपने समाज एवं संस्कृति को माया में बांधे रखने के लिए निम्नलिखित विभिन्न रीतिरिवाजों का पालन करते हैं।

नामकरण : मनुष्य अपने नवजात बच्चे का एक विशेष नाम रखने के लिए एक विशेष रीतिरिवाज का पालन करता है, जिसे नामकरण कहते हैं। विभिन्न समाज एवं संस्कृति में नामकरण रीतिरिवाज का पालन करने की विधि भिन्न होती है। मनुष्य किसी भी विधि के अनुसार नामकरण रीतिरिवाज का पालन करें, उससे मनुष्य के धर्म पर कोई असर नहीं पड़ता है।

विवाह : जब २ मनुष्य तन एवं मन से एकरूप होने के लिए एक विशेष रीतिरिवाज का पालन करते हैं, उसे विवाह कहते हैं। विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विवाह रीतिरिवाज का पालन करने की विधि भिन्न होती है। मनुष्य किसी भी विधि के अनुसार विवाह करें, उससे मनुष्य के धर्म पर कोई असर नहीं पड़ता है।

पृथ्वीलोक पर मनुष्य की ८ विभिन्न प्रजातियां होती हैं, मनुष्य किस प्रजाति के साथ विवाह करता है, इससे धर्म, अर्थ, काम पर गहरा असर पड़ता है। मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करने के लिए अपने अनुकूल प्रजाति के उचित मनुष्य के साथ विवाह करना अति आवश्यक होता है। अनुचित मनुष्य के साथ विवाह करने पर मनुष्य कभी भी धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति नहीं कर पाता है, और ना ही मोक्ष की प्राप्ति कर पाता है।

१ पूर्णपुरुष, २ पूर्णस्त्री, ३ समलैंगिक कर्मी पुरुष, ४ समलैंगिक कर्मी स्त्री, ५ समलैंगिक भोगी पुरुष, ६ समलैंगिक भोगी स्त्री, ७ किन्नर, ८ हिजड़ा आदि मनुष्य की ८ प्रजातियां होती हैं। एक पूर्णपुरुष केवल पूर्णस्त्री और समलैंगिक कर्मी स्त्री के साथ विवाह कर सकता है। एक पूर्णस्त्री केवल पूर्णपुरुष और समलैंगिक कर्मी पुरुष के साथ विवाह कर सकती है।

एक समलैंगिक कर्मी पुरुष केवल पूर्णस्त्री, समलैंगिक कर्मी स्त्री, समलैंगिक भोगी पुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, किन्नर, हिजड़ा आदि से विवाह कर सकता है। एक समलैंगिक कर्मी स्त्री केवल पूर्णपुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, समलैंगिक भोगी स्त्री, समलैंगिक कर्मी स्त्री, किन्नर आदि से विवाह कर सकती है।

एक समलैंगिक भोगी पुरुष केवल समलैंगिक कर्मी पुरुष और किन्नर के साथ विवाह कर सकता है। एक समलैंगिक भोगी स्त्री केवल समलैंगिक कर्मी स्त्री के साथ विवाह कर सकती है। एक किन्नर केवल समलैंगिक भोगी पुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, समलैंगिक कर्मी स्त्री, किन्नर आदि के साथ विवाह कर सकते हैं। एक हिजड़ा केवल समलैंगिक कर्मी पुरुष के साथ विवाह कर सकता है।

पूर्णपुरुष जब समलैंगिक भोगी स्त्री के साथ विवाह करता है, तब अनर्थ होता है। पूर्णस्त्री जब समलैंगिक भोगी पुरुष के साथ विवाह करती है, तब अनर्थ होता है। समलैंगिक भोगी पुरुष जब समलैंगिक भोगी पुरुष के साथ विवाह करता है, तब अनर्थ होता है। समलैंगिक भोगी स्त्री जब समलैंगिक भोगी स्त्री के साथ विवाह करती है, तब अनर्थ होता है।

मनुष्य को केवल अपने अनुकूल प्रजाति एवं उचित मनुष्य के साथ ही विवाह करना होता है, तभी मनुष्य धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करने के लिए सक्षम होता है। मनुष्य किस विधि के अनुसार विवाह करता है, कोई मायने नहीं रखता है, किन्तु मनुष्य किसके साथ विवाह करता है, यह बहुत मायने रखता है। इसलिए मनुष्य को स्वयं अपने जीवनसाथी का चयन करना है।

विभिन्न समाज विवाह संबंधित अनेकों रीतिरिवाजों का निर्माण करते हैं। सभी रीतिरिवाज भौतिक सुख-दुख एवं पाप-पुण्य का कारण होते हैं। जिन रीतिरिवाजों से मनुष्य को आनंद, तृप्ति, प्रसन्नता, सुख, प्रेम, पवित्रता आदि ईश्वरीय भाव की अनुभूति होती है, ऐसे रीतिरिवाज का उत्साह के साथ पालन करना है। किंतु जिन रीतिरिवाजों से मनुष्य को अशांति, अतृप्ति, क्रोध, चिंता, भय, दुख, द्वेष, अहंकार आदि नकारात्मक भाव की अनुभूति होती है, मनुष्य को ऐसे रीतिरिवाजों का बहिष्कार करना है। अधिकतर विवाह में बाधा उत्पन्न होने का प्रमुख कारण रीतिरिवाज होते हैं।

मनुष्य को जानना आवश्यक है कि रीतिरिवाज मनुष्य द्वारा बनाए जाते हैं, परमेश्वर, ईश्वर, भगवान आदि कोई भी रीतिरिवाजों की रचना नहीं करते हैं। शैतान एवं चुड़ैल समाज को गुलाम बनाने के लिए झूठी कहानी, झूठी मान्यता का प्रचार करते हुए तुच्छ रीतिरिवाजों की रचना करते हैं।

अगर कोई रीतिरिवाज विवाह में बाधा उत्पन्न करते हैं, ऐसी रीतिरिवाज का पूर्णतः बहिष्कार करना है। किसी रीतिरिवाज का पालन नहीं करने से मनुष्य के विवाहित जीवन पर कोई फर्क नहीं पड़ता है, बल्कि रीतिरिवाज का पालन करने से मनुष्य अपना समय, धन, ऊर्जा खो देता है।

जो मनुष्य जीवनसाथी के लिए अपना तन एवं मन समर्पित करने के लिए इच्छुक होता है, ऐसे मनुष्य को विवाह करने के लिए किसी भी रीतिरिवाज का पालन करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। जिस विवाह में अधिक रीतिरिवाजों का पालन होता है, ऐसा विवाह एक समझौता होता है।

जो मनुष्य जीवनसाथी के लिए अपना तन एवं मन समर्पित नहीं कर सकता है, अपने परिवार की इच्छा एवं निजी लाभ के लिए विवाह करता है, ऐसे मनुष्य को विवाद करने के लिए विभिन्न रीतिरिवाजों का सहारा लेना पड़ता है।

शवयात्रा : जब किसी मनुष्य की मृत्यु हो जाती है, तब वो मनुष्य अपना नाम, पहचान, अस्तित्व सब खो देता है, और केवल एक शव बन जाता है। जब मित्र-परिवार वाले शव को जलाकर मिटाने के लिए घर से श्मशान लेकर जाते हैं, उस यात्रा को शवयात्रा कहते हैं।

कलयुग में मनुष्य माया का इतना गुलाम हो चुका होता है कि वह शवयात्रा के सम्बंधित अनेकों रीतिरिवाजों की रचना करता है और उसका ध्यानपूर्वक पालन भी करता है। शवयात्रा के संबंधित किसी रीतिरिवाज का पालन करना, मनुष्य की मूर्खता को दर्शाता है।

शव को जलाकर नष्ट करना मनुष्य का सामाजिक कर्तव्य होता है। शव को जलाकर नष्ट करने के लिए किसी भी रीतिरिवाज का पालन करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। शवयात्रा में किसी भी रीतिरिवाज का पालन करने से शव को कोई लाभ-हानि नहीं होती है, किंतु शव के परिजनों को समय और धन की हानि होती है।

कर्मकांड : परमेश्वर, ईश्वर, भगवान, देवी-देवता से भौतिक सुख और मोक्ष प्राप्ति के लिए मनुष्य विभिन्न रीतिरिवाजों का पालन करता है, जिसे कर्मकांड कहते हैं। परमेश्वर किसी भी कर्मकांड की रचना नहीं करते हैं। केवल शैतान समाज को गुलाम बनाने एवं स्वयं के भौतिक लाभ के लिए विभिन्न कर्मकांड एवं मूर्तिपूजा की रचना करते हैं।

शैतान एवं दुष्ट मनुष्यों द्वारा परमेश्वर, ईश्वर, भगवान, देवी-देवता आदि के नाम पर झूठी कहानियां रचाकर उसके संबंधित विभिन्न कर्मकांड रचे जाते हैं। कोई भी कर्मकांड एवं मूर्तिपूजा करने से मनुष्य को भौतिक सुख एवं मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है। कर्मकांड उच्च श्रेणी के मनुष्य को तुच्छ श्रेणी के कीड़ेमकोड़े के भाँती बनाते हैं।

मनुष्य सामाजिक मान्यताओं और परमेश्वर, ईश्वर, भगवान, देवी-देवता की झूठी कहानियों के आधार पर चित्रविचित्र कर्मकांड एवं रीतिरिवाजों का पालन करते हैं। मैं नारायण परमेश्वर कर्मकांड करने वाले अज्ञानी मनुष्य को मोक्ष नहीं देता हूँ। इसलिए मनुष्य को किसी भी कर्मकांड का पालन नहीं करना होता है।

प्रत्येक संस्कृति के समाज में नामकरण, विवाह, शवयात्रा, कर्मकांड आदि अनेकों रीतिरिवाजों में विभिन्नता होती है। मनुष्य स्वयं को सुख एवं आनंद देने के लिए उचित रीतिरिवाजों का पालन कर सकता है, किन्तु मनुष्य को अधर्म कराने वाले किसी भी रीतिरिवाजों का पालन नहीं करना होता है।

२ नृत्य

नृत्य : नृत्य संस्कृति का उर्जात्मक तत्व है। नृत्य करने पर मनुष्य के भीतर ऊर्जा का संचार होता है। समाज में उत्साह एवं सकारात्मक ऊर्जा बनी रहे, इसलिए मनुष्य को नियमित नृत्य का कार्यक्रम करना होता है। सांस्कृतिक नृत्य और कामुक नृत्य आदि नृत्य के २ प्रमुख प्रकार होते हैं।

नृत्यशास्त्र का प्रशिक्षण लेने वाले नर्तक-नर्तकी धर्म एवं संस्कृति का प्रचार करने के लिए सांस्कृतिक नृत्य का अभ्यास करते हैं। सामान्य मनुष्य अपनी कार्यसिद्धि, उपलब्धि पर जश्न मनाने के लिए कामुक नृत्य करते हैं।

नृत्य करना सुखी मनुष्य की पहचान होती है। प्रत्येक मनुष्य को अत्यधिक सुख, आनंद, प्रसन्नता, प्रेम, तृप्ति आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति करने के लिए नृत्य अवश्य करना चाहिए। प्रत्येक समाज में नृत्य करने की तकनीकि भिन्न होती है। नृत्य करने की विभिन्न तकनीकि मनुष्य के भीतर विभिन्न भाव उत्पन्न करती है।

मनुष्य को प्रेम, सुख, आनंद आदि ईश्वरीय भावों को उत्पन्न करने वाले नृत्य तकनीकि का स्वीकार करना होता है। मनुष्य को काम, क्रोध, लोभ, नशा आदि नकारात्मक भावों को उत्पन्न करने वाले नृत्य तकनीकि का बहिष्कार करना होता है।

३ संगीत

संगीत : संगीत संस्कृति का भावनात्मक तत्व है। संगीत सुनने से मनुष्य के भीतर विभिन्न ईश्वरीय भाव उत्पन्न होते हैं। शास्त्रीय संगीत, लोकसंगीत, भक्तिसंगीत आदि संगीत के ३ प्रमुख प्रकार होते हैं। विभिन्न वाद्य यंत्रों का एकसाथ उपयोग करते हुए विभिन्न संगीत की रचना की जाती है।

समाज को प्रत्येक स्वर-संगीत का अभ्यास कराने के लिए शास्त्रीय संगीत की रचना की जाती है। समाज का मनोरंजन कराने के लिए लोकसंगीत की रचना की जाती है। समाज के सभी मनुष्यों के मन में परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के प्रति भक्तिभाव उत्पन्न कराने के लिए भजन, कीर्तन, अभंग आदि भक्तिसंगीत की रचना की जाती है।

समाज में धर्म एवं संस्कृति का प्रचार करने के लिए शास्त्रीय संगीत एवं भक्तिसंगीत की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। समाज को गुमराह करने एवं अधर्म का प्रचार करने में लोकसंगीत की अधिक भूमिका होती है। मनुष्य अपने मन में परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के प्रति भक्तिभाव बनाए रखने के लिए नियमित भजन, कीर्तन सुन सकते हैं।

कुछ लोकसंगीत मनुष्य के मन में प्रेम, सुख, आनंद शांति, उत्साह आदि ईश्वरीय भाव उत्पन्न करते हैं, किन्तु कुछ लोकसंगीत मनुष्य के मन में काम, क्रोध, लोभ, नशा, अहंकार, दुख आदि नकारात्मक भाव उत्पन्न करते हैं। मनुष्य को ईश्वरीय भाव उत्पन्न करने वाले सभी लोकसंगीत को स्वीकार करना है और नकारात्मक शैतानी भाव उत्पन्न करने वाले सभी लोकसंगीत का बहिष्कार करना है।

४ भाषा

भाषा : भाषा संस्कृति का विशेष तत्व है। प्रत्येक संस्कृति की एक विशेष भाषा होती है। धर्म की कभी कोई भाषा नहीं होती है, केवल समाज एवं संस्कृति की कोई एक विशेष भाषा होती है। प्रत्येक गाँव, शहर, राष्ट्र, राज्य की भाषा भिन्न भिन्न होती है। मनुष्य एवं समाज द्वारा समय समय पर नवनवीन शब्दों की रचना होती रहती है। अनेकों शब्दों की एकता से भाषा का निर्माण होता है। जब नए शब्दों का प्रयोग अधिक होने लगता है, और पुराने शब्दों का प्रयोग कम होने लगता है, तब पुरानी भाषा का अंत होता है, और नई भाषा का उदय होता है।

मनुष्य को समय के अनुसार पुरानी भाषा का त्याग करके नई भाषा का स्वीकार करना होता है। समाप्त होने वाली पुरानी भाषा को जतन करने का प्रयास करना मनुष्य की मूर्खता होती है। समय रहते अपनी मातृभाषा का जतन करना, प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य होता है, किन्तु जब मातृभाषा का पतन होने लगे तब अपनी पुरानी मातृभाषा को त्यागना और नई मातृभाषा का स्वीकार करना, यह भी मनुष्य का कर्तव्य होता है।

कोई भी भाषा सनातन नहीं रहती है, पुरानी भाषा का अंत होना और नई भाषा का उदय होना, यह समय और प्रकृति का नियम है। इसलिए मनुष्य को किसी भी भाषा के प्रति आसक्ति नहीं रखनी होती है। कोई भी एक भाषा महान एवं ईश्वरीय नहीं होती है। परमेश्वर एवं ईश्वर की कोई भाषा नहीं होती है।

मनुष्य एक सामाजिक जीव है, मनुष्य को समाज के साथ संवाद साधने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है, इसलिए केवल मनुष्य की भाषा होती है। समाज का उद्धार करने एवं समाज को बिगाड़ने में भाषा का प्रमुख योगदान होता है। किसी भी भाषा में इस्तेमाल होने वाले शब्द उस भाषा को पवित्र एवं अपवित्र बनाते हैं। मनुष्य को अपनी भाषा को पवित्र बनाने एवं अपनी भाषा से समाज का उद्धार करने के लिए केवल पवित्र शब्दों का प्रयोग करना होता है, और अपवित्र शब्दों का त्याग करना होता है।

अपवित्र शब्द गाली गलौच का स्वरूप लेते हैं। गाली गलौच भाषा को अपवित्र बनाते हैं, जिस भाषा में गाली गलौच का प्रयोग अधिक होता है, वो भाषा सर्वाधिक अपवित्र होती है। अपवित्र भाषा मनुष्य, परिवार, समाज, देश, आदि सम्पूर्ण मानवजाति को अधर्मी बना सकती है।

किसी भी समाज एवं देश की संस्कृति को बर्बाद करने के लिए अन्य समाज एवं देश के कुछ दुष्ट मनुष्य अन्य संस्कृति में अपवित्र भाषा को बढ़ावा देते हैं। कुछ दुष्ट मनुष्य जानबूझकर अन्य संस्कृति में हिंसक, व्यभिचारी, अश्लील शब्दों को जोड़कर उस संस्कृति की भाषा एवं समाज दोनों को बर्बाद करने का षड्यंत्र रचते हैं।

मनुष्य को अपनी संस्कृति का उद्धार करने के लिए अपनी मातृभाषा को सदैव पवित्र बनाए रखना होता है। अगर किसी मनुष्य की मातृभाषा मराठी है, उस मनुष्य को अपनी मातृभाषा मराठी को पवित्र बनाए रखने के लिए मराठी भाषा में इस्तेमाल किए जाने वाले केवल पवित्र शब्दों का इस्तेमाल करना, और सभी अपवित्र शब्दों का त्याग करना आवश्यक होता है।

पृथ्वीलोक पर हजारों संस्कृतियां होती हैं और प्रत्येक संस्कृति की अपनी एक विशेष मातृभाषा होती है। मनुष्य को अपनी संस्कृति की मातृभाषा का जतन करना होता है, साथ ही अन्य संस्कृति की मातृभाषा का सम्मान करना होता है। किसी अन्य मनुष्य की मातृभाषा का अपमान करना स्वयं की मातृभाषा के अपमान के समान होता है।

पारिवारिक एवं सामाजिक आदि २ प्रकार की मातृभाषा होती हैं। पारिवारिक मातृभाषा केवल मित्र-परिवार के बीच बोलना उचित होती है, सामाजिक मातृभाषा समाज में बोलना आवश्यक होती है। समाज में पारिवारिक मातृभाषा बोलना उचित नहीं होता है।

अपने बच्चों को सामाजिक मातृभाषा का ज्ञान देना, प्रत्येक माता-पिता का कर्तव्य होता है। मनुष्य केवल अपनी मातृभाषा द्वारा अपनी संस्कृति का जतन एवं उद्धार कर सकता है। मनुष्य को अपनी संस्कृति एवं मातृभाषा में अपवित्र शब्द, गाली गलौज आदि का इस्तेमाल नहीं करना होता है।

जिस दिन मनुष्य अपनी संस्कृति में अपवित्र शब्दों का इस्तेमाल करने लगता है, उस दिन से मनुष्य अपनी संस्कृति का अंत होते देखता है। जिस दिन मनुष्य अपनी संस्कृति में अपवित्र शब्दों के इस्तेमाल को त्यागता है, और केवल पवित्र भाषा का इस्तेमाल करता है, उस दिन से मनुष्य अपनी संस्कृति का उद्धार होते देखता है।

५ आहार

आहार : आहार संस्कृति का सुखमय तत्व है। आहार से मनुष्य को सुख, प्रसन्नता, तृप्ति आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति होती है। प्रत्येक समाज एवं संस्कृति में सात्विक, राजसिक, तामसिक आदि ३ गुणों वाले विभिन्न आहार होते हैं। शुद्ध शाकाहारी ताजा भोजन सात्विक आहार होता है। अधिक मसालेयुक्त, तेलयुक्त, दूध, घी, खट्टा, मीठा शाकाहारी ताजा भोजन राजसिक आहार होता है। मांसाहारी एवं बासी भोजन तामसिक आहार होता है।

प्रत्येक समाज एवं संस्कृति में सात्विक, राजसिक, एवं तामसिक आदि सभी गुणों वाले आहार का समावेश होता है। किंतु प्रत्येक समाज एवं संस्कृति में किसी एक गुण वाले आहार का अधिक प्रभाव होता है। जिस संस्कृति में सात्विक आहार का अधिक प्रभाव होता है, उस संस्कृति का समाज बहुत ही शांत स्वभाव वाला होता है। जिस संस्कृति में राजसिक आहार का अधिक प्रभाव होता है, उस

संस्कृति का समाज बहुत ही शौकीन स्वभाव वाला होता है। जिस संस्कृति में तामसिक आहार का अधिक प्रभाव होता है, उस संस्कृति का समाज बहुत ही हिंसक स्वभाव वाला होता है।

मनुष्य जिस गुण वाले आहार को ग्रहण करता है, मनुष्य का स्वभाव उस आहार के अनुकूल हो जाता है। सात्विक आहार ग्रहण करने वाले मनुष्य का स्वभाव शांत हो जाता है। राजसिक आहार ग्रहण करने वाले मनुष्य का स्वभाव शौकीन हो जाता है। तामसिक आहार ग्रहण करने वाले मनुष्य का स्वभाव हिंसक हो जाता है।

जिस पदार्थ में प्राणऊर्जा होती है, मनुष्य एवं अन्य जीव उसी पदार्थ को आहार के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। जिस पदार्थ में प्राणऊर्जा नहीं होती है, ऐसे पदार्थ को आहार के रूप में ग्रहण करना अधर्म होता है। प्रकृति के वायु, अग्नि, जल, भूमि आदि चार तत्वों के विशेष पदार्थों में प्राणऊर्जा होती है।

भूमि तत्व के पेड़पौधे, जीवजंतु, मछली, पशुपक्षी, मनुष्य आदि सभी में प्राणऊर्जा होती है, किन्तु मनुष्य को किसी भी पेड़पौधे अथवा पशुपक्षी को आहार के रूप में ग्रहण नहीं करना होता है। मनुष्य को कुछ विशेष पेड़पौधों को शाकाहार भोजन के रूप में ग्रहण करना होता है, उसी प्रकार मनुष्य को कुछ विशेष भोजनीय पशु को मांसाहार भोजन के रूप में ग्रहण करना होता है।

मनुष्य शाकाहार एवं मांसाहार दोनों प्रकार का भोजन ग्रहण कर सकता है, किन्तु मनुष्य को किसी भी प्रकार का बासी भोजन ग्रहण नहीं करना होता है। जिस संस्कृति में बासी भोजन का अधिक समावेश होता है, ऐसी संस्कृति का समाज विकृत मानसिकता का शिकार हो जाता है।

६ वेशभूषा

वेशभूषा : वेशभूषा संस्कृति की पहचान होती है। मनुष्य की संस्कृति उसकी वेशभूषा से पहचानी जाती है। मनुष्य अपने समाज में मौजूद संसाधनों से विशेष वेशभूषा की रचना करता है। एक विशेष समाज में रहने वाले सभी मनुष्य एक समान वेशभूषा परिधान करते हैं। वेशभूषा समाज में एकता बनाए रखती है।

वेशभूषा के वस्त्र, गहनें और श्रृंगार आदि ३ तत्व होते हैं। प्रत्येक संस्कृति के समाज में वस्त्र पहनने की पद्धति, गहनों की बनावट और श्रृंगार की सामग्री भिन्न होती है। मनुष्य किस पद्धति से वस्त्र पहनता है, अथवा किस बनावट के गहने पहनता है, इससे धर्म पर कोई असर नहीं पड़ता है।

मनुष्य किस पद्धति से वस्त्र पहनता है, किस बनावट के गहने पहनता है, अथवा किन किन सामग्रियों से श्रृंगार करता है, इससे मनुष्य के पाप-पुण्य पर बहुत असर पड़ता है। खूबसूरत वस्त्र, गहनें एवं श्रृंगार आदि भोगी मनुष्य के मन में सुख, आनंद, तृप्ति, शांति, प्रसन्नता आदि ईश्वरीय भाव उत्पन्न करते हैं, जिससे मनुष्य के पुण्य में बढ़ोत्तरी करते हैं।

मनुष्य की कुल ८ प्रजातियों में से पूर्णस्त्री, समलैंगिक कर्मी स्त्री, समलैंगिक भोगी स्त्री, समलैंगिक भोगी पुरुष, किन्नर, हिजड़ा आदि ६ प्रजातियों का मूल स्वभाव भोगी होता है। भोगी स्वभाव वाले सभी मनुष्य अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति के लिए नियमित खूबसूरत वस्त्र, सुशोभित गहनें, आदि पहनकर आकर्षक श्रृंगार कर सकते हैं।

अस्वच्छ एवं फटे पुराने वस्त्र मनुष्य के मन में क्रोध, अशांति, निराशा, ईर्ष्या आदि नकारात्मक भाव उत्पन्न करते हैं, जिससे मनुष्य के पाप में बढ़ोत्तरी होती है। निर्वस्त्र मनुष्य पशु समान होते हैं। जिस समाज में मनुष्य अस्वच्छ, फटे पुराने वस्त्र पहनते हैं अथवा निर्वस्त्र रहते हैं, ऐसे समाज को असभ्य समाज कहते हैं।

सनातन धर्म की कोई एक विशेष वेशभूषा नहीं होती है, किन्तु प्रत्येक संस्कृति की एक विशेष वेशभूषा होती है। मनुष्य अपनी संस्कृति को दर्शाने के लिए एक विशेष वेशभूषा का अनुसरण करता है। कुछ मनुष्य परिवार, समाज एवं स्वयं को आनंदित रखने के लिए सांस्कृतिक वेशभूषा धारण करते हैं। कुछ मनुष्य केवल परिवार एवं समाज को आनंदित करने के लिए सांस्कृतिक वेशभूषा धारण करते हैं।

पृथ्वीलोक पर कुल ४ लाख विभिन्न नस्ल एवं १०८ विभिन्न स्वभाव वाले मनुष्य होते हैं। सभी मनुष्य को अपनी संस्कृति की वेशभूषा के प्रति आकर्षण एवं आसक्ति रहे असंभव है। प्रत्येक मनुष्य को अपने स्वभाव के अनुसार विशेष वेशभूषा धारण करने की स्वतंत्रता होती है।

जिस संस्कृति की वेशभूषा में विभिन्नता होती है, ऐसी संस्कृति पवित्र एवं महान होती है। जिस संस्कृति के मनुष्य एवं समाज को एकसमान वेशभूषा रखना अनिवार्य होता है, ऐसी संस्कृति अपवित्र एवं तुच्छ होती है। मनुष्य को ऐसी अपवित्र एवं तुच्छ संस्कृति का त्याग एवं बहिष्कार करना होता है।

७ उत्सव

उत्सव : उत्सव संस्कृति का प्राण तत्व है। उत्सव से संस्कृति में प्राण का संचार होता है। उत्सव ही संस्कृति को जीवित रखता है। जिस संस्कृति का मनुष्य एवं समाज उत्सव से अधिक जुड़ा हुआ होता है, उस संस्कृति का वर्तमान एवं भविष्य बहुत ही सशक्त होता है।

धार्मिक उत्सव, सांस्कृतिक उत्सव और सामाजिक उत्सव आदि ३ प्रकार के उत्सव मनाए जाते हैं। धर्म संबंधित उत्सव को धार्मिक उत्सव कहते हैं। संस्कृति संबंधित उत्सव को सांस्कृतिक उत्सव कहते हैं। परिवार एवं समाज संबंधित उत्सव को सामाजिक उत्सव कहते हैं।

विश्व के सभी विभिन्न संस्कृति एवं समाज के सभी मनुष्यों को सभी धार्मिक उत्सव बड़े धूमधाम से मनाने होते हैं। एक विशेष संस्कृति के मनुष्य एवं समाज को अपने सांस्कृतिक उत्सव को बड़े धूमधाम से मनाना होता है। एक विशेष समाज के मनुष्य को अपने सामाजिक उत्सव को बड़े धूमधाम से मनाना होता है।

धर्म सनातन होता है, इसलिए धर्म संबंधित धार्मिक उत्सव भी सनातन होते हैं। संस्कृति और समाज सनातन नहीं होते हैं, समय के अनुसार संस्कृति एवं समाज में बदलाव होते रहते हैं, जिसके कारण सांस्कृतिक उत्सव और सामाजिक उत्सव सनातन नहीं होते हैं। समय के अनुसार सांस्कृतिक उत्सव और सामाजिक उत्सव में बदलाव होते रहते हैं।

धार्मिक उत्सव : सनातन धर्म के ५ सनातन उत्सव होते हैं। कालारम्भ, वनउगम, दुर्गोत्सव, ज्ञानपर्व, धर्ममेला आदि ५ धार्मिक उत्सव पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि सभी ७ ग्रहलोक पर धूमधाम से मनाए जाते हैं।

कालारम्भ : चैत्र महीने की पहली तारीख के दिन कालारम्भ उत्सव मनाया जाता है। कालारम्भ उत्सव को विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विभिन्न नाम एवं विशेष विधि के अनुसार धूमधाम से मनाया जाता है। भारत की मराठी संस्कृति में इसे नववर्षारंभ एवं गुड़ीपड़वा के नाम से शोभायात्रा निकालकर धूमधाम से मनाया जाता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने चैत्र महीने के पहले दिन मेरे पहले आयाम समय की उत्पत्ति की है। मैंने इसी दिन निराकार ईश्वर ब्रह्म, विष्णु, शिव की उत्पत्ति की है। मैं नारायण प्रत्येक धर्मवर्ष के चैत्र महीने के पहले दिन से अगले ४० दिन तक निराकार ईश्वर दुर्गा द्वारा प्रति दिन १००० नारद अवतार अर्थात् मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित करता हूँ।

पृथ्वीलोक पर मनुष्य का पुनर्जन्म वर्ष के किसी भी दिन एवं महीने में हो सकता है, किन्तु मनुष्य का प्रथम पिंडजन्म केवल धर्मवर्ष के चैत्र-वैशाख महीने में होता है। चैत्र महीने के पहले दिन मनुष्य का पृथ्वीलोक पर अवतरित होने का आरंभ हुआ था, और इसी दिन मेरे अर्थात् परमेश्वर के भीतर काल का आरंभ हुआ था, इसलिए चैत्र महीने के पहले दिन को कालारम्भ कहते हैं।

विश्व के सभी मनुष्यों को कालारम्भ उत्सव बड़े धूमधाम से मनाना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को अपनी अपनी सांस्कृतिक वेशभूषा धारण करना चाहिए, खूबसूरत एवं आकर्षक श्रृंगार करना चाहिए। स्वादिष्ट भोजन करना चाहिए। अपने परिसर, गांव, शहर आदि स्थानीय क्षेत्रों में नाचते गाते हुए शोभायात्रा निकालनी चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को शोभायात्रा में उत्साह के साथ नाचते गाते सम्मिलित होना चाहिए।

पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक होते हैं। प्रत्येक ग्रहलोक पर समय की अवधि भिन्न होती है, इसलिए सभी ग्रहलोक पर कालगणना की रचना भिन्न भिन्न होती है। सभी ग्रहलोक पर काल का आरंभ एक ही समय हुआ है, इसलिए प्रत्येक ग्रहलोक पर कालारम्भ उत्सव बड़े धूमधाम से मनाया जाता है।

वनउगम : आषाढ़ महीने की पहली तारीख के दिन वनउगम उत्सव मनाया जाता है। वनउगम उत्सव को विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विभिन्न नाम एवं विशेष विधि के अनुसार मनाया जाता है। भारत की मराठी संस्कृति में इसे वटपौर्णिमा के नाम से मनाया जाता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैं प्रत्येक पर्व के उदयकाल के तीसरे चतुर्युग के सतयुग के पहले वर्ष के आषाढ़ महीने के पहले दिन पृथ्वीलोक पर वृक्ष को उत्पन्न करता हूँ। मैंने आषाढ़ महीने के पहले दिन निराकार ईश्वर दुर्गा द्वारा निराकार ईश्वर काली को उत्पन्न किया है।

सनातन काल से पृथ्वीलोक पर प्रत्येक पर्व के उदयकाल के तीसरे चतुर्युग के सतयुग के पहले वर्ष के आषाढ़ महीने के पहले दिन से वन एवं जंगल की उत्पत्ति होती रहती है, इसलिए इस दिन सभी पेड़पौधे, वन, वृक्ष, को अभिवादन करने के लिए वनउगम उत्सव मनाया जाता है। विश्व के सभी मनुष्यों को अपने घर, परिसर में पेड़पौधे लगाकर अथवा अपने परिसर में मौजूद पेड़पौधों पर जल चढ़ाकर वनउगम उत्सव मनाना होता है। मनुष्य को पेड़पौधों से प्राणवायु एवं भोजन प्राप्त होता है। सभी मनुष्य को पेड़पौधों के प्रति आभार व्यक्त करने के लिए वनउगम उत्सव अवश्य मनाना है।

मैं नारायण परमेश्वर पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि प्रत्येक ग्रहलोक पर एक विशेष समय पर वृक्ष, वन की उत्पत्ति करता हूँ। प्रत्येक ग्रहलोक पर मनुष्य वनउगम उत्सव को प्रेमभाव से मनाते है।

दुर्गोत्सव : आश्विन महीने की पहली तारीख के दिन दुर्गोत्सव मनाया जाता है। दुर्गोत्सव को विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विभिन्न नाम एवं विशेष विधि के अनुसार मनाया जाता है। भारत की मराठी संस्कृति में इसे नवरात्रि एवं दसरा के नाम से मनाया जाता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने अश्विन महीने के पहले दिन निराकार ईश्वर दुर्गा की उत्पत्ति की है। मैंने इसी दिन निराकार ईश्वर दुर्गा द्वारा निराकार ईश्वर लक्ष्मी को उत्पन्न किया है। निराकार ईश्वर दुर्गा के अनंत स्वभाव एवं रंग होते हैं। पृथ्वीलोक पर निराकार ईश्वर दुर्गा के ८४ लाख विभिन्न नस्ल, ८४ लाख विभिन्न रंग होते हैं, ८४ लाख विभिन्न स्वभाव होते हैं, जिनमें ९ स्वभाव एवं ९ रंग प्रमुख होते हैं। मुक्ता, आनंदी, प्रज्ञा, शांता, भाग्यश्री, प्रियसी, निर्मला, कामिनी, सेविका आदि निराकार ईश्वर दुर्गा के ९ प्रमुख स्वभाव होते हैं, और क्रमशः काला, बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी, लाल, सफेद आदि ९ प्रमुख रंग होते हैं।

मनुष्य को दुर्गोत्सव का पहला दिन सेविका स्वभाव एवं सफेद रंग को समर्पित करना है, दूसरा दिन कामिनी स्वभाव एवं लाल रंग को समर्पित करना है, तीसरा दिन निर्मला स्वभाव एवं नारंगी रंग को समर्पित करना है, चौथा दिन प्रेमिका स्वभाव एवं पीला रंग को समर्पित करना है, पांचवा दिन भाग्यश्री स्वभाव एवं हरा रंग को समर्पित करना है, छठवां दिन शांता स्वभाव एवं आसमानी रंग को समर्पित करना है, सातवां दिन प्रज्ञा स्वभाव एवं नीला रंग को समर्पित करना है, आठवां दिन आनंदी स्वभाव एवं बैंगनी रंग को समर्पित करना है, नवां दिन मुक्ता स्वभाव एवं काला रंग को समर्पित करना है।

विश्व के सभी मनुष्यों को प्रति दिन निराकार ईश्वर दुर्गा के एक स्वभाव एवं एक रंग को समर्पित करते हुए अगले नौ दिन तक नाचते गाते हुए बड़े धूमधाम से दुर्गोत्सव मनाना है। अंतिम दसवें दिन सभी नस्लें, स्वभाव, एवं रंगों को समर्पित करते हुए अपने आसपास मौजूद सभी जीव एवं मनुष्य को स्वादिष्ट फल, मिठाई, भोजन खिलाकर बड़े धूमधाम से दसरा उत्सव मनाना है।

ज्ञानपर्व : पौष महीने के पहले दिन ज्ञानपर्व मनाया जाता है। ज्ञानपर्व को विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विभिन्न नाम एवं विशेष विधि के अनुसार मनाया जाता है। भारत की मराठी संस्कृति में इसे दिवाळी और अन्य संस्कृति में इसे दीपपर्व, दीपावली आदि नाम से मनाया जाता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैं प्रत्येक पर्व के प्राचीनकाल के पहले चतुर्युग के सतयुग के पहले वर्ष के पौष महीने के पहले दिन से निराकार ईश्वर सरस्वती द्वारा मनुष्य की आत्मा में आध्यात्मिक ज्ञान प्रकाशित करता हूँ। मैंने इसी दिन निराकार ईश्वर दुर्गा द्वारा निराकार ईश्वर सरस्वती को उत्पन्न किया है।

विश्व के सभी मनुष्यों को भजन, कीर्तन, सत्संग आदि धार्मिक कार्यक्रमों में सम्मिलित होकर धार्मिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना, नवनवीन सुंदर वस्त्र एवं आकर्षक गहनों परिधान करते हुए अदभुत श्रृंगार करना, अपने घर, परिसर को सुशोभित बनाना, आदि विभिन्न कार्यक्रम करते हुए धूमधाम से ज्ञानपर्व उत्सव मनाना है।

मैं नारायण परमेश्वर पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि प्रत्येक ग्रहलोक पर एक विशेष समय पर निराकार ईश्वर सरस्वती द्वारा मनुष्य की आत्मा में आध्यात्मिक ज्ञान प्रकाशित करता हूँ। प्रत्येक ग्रहलोक पर मनुष्य सत्संग एवं कीर्तन करते हुए ज्ञानपर्व उत्सव धूमधाम से मनाते हैं।

धर्ममेला : चैत्र महीने के पहले दिन से अगले ४० दिन तक धर्ममेला उत्सव मनाया जाता है। धर्ममेला उत्सव को विभिन्न समाज एवं संस्कृति में विभिन्न नाम एवं विशेष विधि के अनुसार धूमधाम से मनाया जाता है। भारतीय संस्कृति में इसे कुंभमेला के नाम से सत्संग एवं कीर्तन के कार्यक्रमों का मेला लगाकर धर्ममेला उत्सव को धूमधाम से मनाया जाता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैं नारायण प्रत्येक धर्मवर्ष के चैत्र महीने के पहले दिन से अगले ४० दिन तक निराकार ईश्वर दुर्गा द्वारा प्रति दिन १००० नारद अवतार अर्थात् मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित करता हूँ। प्रति १२ वर्ष के बाद १ धर्मवर्ष होता है।

पशुपक्षी, मनुष्य एवं भगवान आदि सभी अवतार केवल धर्मवर्ष में पृथ्वीलोक पर अवतरित होते हैं। एक धर्मवर्ष में ४०००० मनुष्य पृथ्वीलोक के विभिन्न गांव, शहर, देश, खंड आदि क्षेत्रों में अवतरित होते हैं, किन्तु भारत देश एक आध्यात्मिक ऊर्जावान भूमि होने के कारण शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ भगवान केवल भारत देश में अवतरित होते हैं।

विश्व के सभी गांव, शहर, राज्य, देश के शासक एवं धर्मगुरु को अपने स्थायी क्षेत्र में ४० दिन के धर्ममेला का आयोजन करना होता है। विश्व के सभी धर्मगुरुओं को धर्ममेला में सम्मिलित होकर सत्संग एवं भजन, कीर्तन द्वारा समाज को ४० दिनों तक धर्म, अर्थ, काम का सम्पूर्ण ज्ञान देकर मोक्ष प्राप्ति के लिए प्रोत्साहित एवं मार्गदर्शन करना होता है।

मैं नारायण परमेश्वर पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि प्रत्येक ग्रहलोक पर एक विशेष समय पर पशुपक्षी, मनुष्य एवं भगवान को अवतरित करता हूँ। प्रत्येक ग्रहलोक पर मनुष्य सत्संग एवं कीर्तन का मेला आयोजित करते हुए धर्ममेला उत्सव धूमधाम से मनाते हैं।

सांस्कृतिक उत्सव : विभिन्न समाज को एक संस्कृति के तहत एकत्रित करने के लिए सांस्कृतिक उत्सव मनाए जाते हैं। जन्मदिन, मृत्युदिन, स्थापनादिन, घटनादिन आदि विशेष दिन का जश्न मनाने के लिए सांस्कृतिक उत्सव मनाए जाते हैं।

भगवान, देवी, देवता, धर्मगुरु इनके जन्मदिन एवं मृत्युदिन का जश्न मनाने के लिए स्थायी क्षेत्र में नाचते, गाते हुए रथयात्रा, पालकी निकाली जाती है। संस्कृति एवं समाज का स्थापना दिवस अथवा संस्कृति एवं समाज में घटी विशेष घटनाओं का जश्न मनाने के लिए नृत्य, संगीत, भजन, कीर्तन, सत्संग आदि कार्यक्रमों का आयोजन करते हुए सांस्कृतिक उत्सव मनाए जाते हैं।

सांस्कृतिक उत्सव की संख्या समय के साथ कम ज्यादा होती रहती है। कुछ सांस्कृतिक उत्सव समय के साथ लुप्त होते हैं, कुछ सांस्कृतिक उत्सव समय के साथ नए से रचे जाते हैं। विभिन्न समाज को एकत्रित करना, सांस्कृतिक उत्सव का प्रमुख उद्देश्य होता है।

सामाजिक उत्सव : समाज एवं परिवार को एकत्रित करने के लिए सामाजिक उत्सव मनाए जाते हैं। सामाजिक उत्सव समाजसुधारक एवं पारिवारिक रिश्तों के लिए समर्पित होता है। समाजसुधारकों का जन्मदिन एवं मृत्युदिन, विवाह समारोह, सामाजिक विशेष घटना, आदि विशेष दिन का जश्न मनाने के लिए सामाजिक उत्सव मनाए जाते हैं।

दादा-दादी, नाना-नानी, माता-पिता, बेटा-बेटी, भाई-बहन, पति-पत्नी, गुरु-शिष्य, मित्र-मैत्री, प्रेमी-प्रेमिका आदि रिश्तों को सम्मानित करने के लिए सामाजिक एवं पारिवारिक उत्सव मनाए जाते हैं। समाज एवं परिवार को एकत्रित करना, सामाजिक उत्सव का प्रमुख उद्देश्य होता है।

कुछ सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सव मनुष्य के मन में प्रसन्नता, प्रेम, सुख, आनंद, मुक्ति, तृप्ति, समर्पण, आदि ईश्वरीय भाव उत्पन्न करते हैं। कुछ सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सव मनुष्य के मन में क्रोध, भय, चिंता, अहंकार आदि शैतानी भाव उत्पन्न करते हैं।

मनुष्य को अपने मन में शैतानी भाव उत्पन्न करने वाले सांस्कृतिक एवं सामाजिक उत्सव का बहिष्कार करना होता है। मनुष्य को अपने मन में ईश्वरीय भाव उत्पन्न करने वाले सांस्कृतिक एवं सामाजिक आदि सभी प्रकार के उत्सव बड़े धूमधाम से मनाने होते हैं।

धार्मिक, सांस्कृतिक, एवं सामाजिक किसी भी उत्सव को मनाने अथवा नहीं मनाने से मनुष्य के धर्म पर कोई असर नहीं पड़ता है। धार्मिक, सांस्कृतिक, एवं सामाजिक किसी भी उत्सव को मनाने से मनुष्य के पुण्य एवं भाग्य पर बहुत असर पड़ता है।

धार्मिक, सांस्कृतिक, एवं सामाजिक किसी भी उत्सव को मनाने से मनुष्य के मन एवं आत्मा को अत्यधिक ईश्वरीय भावों की अनुभूति होती है, जिससे मनुष्य को सर्वाधिक पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति के लिए अपने मन में ईश्वरीय भाव उत्पन्न करने वाले धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक आदि सभी प्रकार के उत्सव बड़े धूमधाम से मनाने होते हैं।

८ वास्तु

वास्तु : वास्तु संस्कृति की अनमोल संपत्ति होती है। वास्तु की विशेषता से संस्कृति की महानता आकी जाती है। घर, गुरुकुल, विद्यालय, बाड़ा, महल, किला, मूर्ति एवं मंदिर आदि की बनावट, ऐतिहासिक साहित्य, सांस्कृतिक साहित्य, सांस्कृतिक चिन्ह, झंडा, अस्त्र-शस्त्र आदि वास्तु के विभिन्न अंग होते हैं। प्रत्येक संस्कृति की वास्तु भिन्न होती है। वास्तु सनातन नहीं होती है, समय के साथ वास्तु के विभिन्न तत्वों में बदलाव होते रहते हैं। कुछ शैतान एवं चुड़ैल संस्कृति के वास्तु में बिगाड़ एवं बदलाव करके उस संस्कृति के समाज को गुमराह करने की चेष्टा करते रहते हैं।

ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक साहित्य प्रत्येक संस्कृति की रचना में विशेष महत्वपूर्ण योगदान निभाते हैं। इसलिए किसी भी संस्कृति एवं समाज का विनाश करने के लिए शैतान एवं चुड़ैल उस संस्कृति के ऐतिहासिक साहित्य में घालमेल करते हैं, काल्पनिक कहानियां रचते हैं, अभद्र रीतिरिवाजों की नोंद करते हैं। प्रत्येक संस्कृति के ऐतिहासिक साहित्य में घालमेल होना निश्चित होता है। शैतान एवं

चुड़ैल स्वयं को महान साबित करने के लिए संस्कृति के ऐतिहासिक साहित्य में घालमेल करते रहते हैं, जिसे रोकना प्रत्येक संस्कृति एवं समाज के लिए असंभव है। इसलिए मनुष्य को प्रत्येक संस्कृति के ऐतिहासिक साहित्य को मिलावटी एवं नकली मानते हुए किसी भी ऐतिहासिक साहित्य को स्वीकार नहीं करना है।

जो मनुष्य एवं समाज ऐतिहासिक साहित्य को सच मानते हुए उसका अनुकरण करते हैं, वे मनुष्य एवं समाज अपने मूल संस्कृति को सदैव के लिए खो देते हैं। जो मनुष्य एवं समाज सांस्कृतिक साहित्य का अनुकरण करते हैं, वे मनुष्य एवं समाज अपने मूल संस्कृति का अच्छे से जतन करते हैं। मनुष्य को केवल सांस्कृतिक साहित्य का अध्ययन एवं अनुसरण करना है, किन्तु ऐतिहासिक साहित्य को काल्पनिक मानते हुए उसका अनुकरण नहीं करना है।

मनुष्य अपनी संस्कृति के विभिन्न तत्वों का जतन करने के लिए मूर्ति एवं चित्र की रचना करते हैं। अत्यधिक सांस्कृतिक चित्र एवं मूर्तियाँ प्रत्येक संस्कृति को समृद्ध बनाते हैं। भगवान एवं ईश्वर सीमित होने के कारण मनुष्य अपने संस्कृति के अनुसार भगवान एवं ईश्वर की चित्र एवं मूर्तियाँ बनाते हैं।

जो मनुष्य ईश्वर को किसी निर्जीव मूर्ति में ढूँढने की चेष्टा करता है, ऐसे अज्ञानी मनुष्य को ईश्वर एवं मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। एक नास्तिक मनुष्य को उसके अच्छे कर्मों से मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है, किन्तु एक धार्मिक अज्ञानी मनुष्य को मूर्तिपूजा करने के कारण मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

मनुष्य ईश्वर एवं भगवान की मूर्तियों को ईश्वर एवं भगवान के प्रतीक के रूप में स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु निर्जीव काल्पनिक मूर्ति को ईश्वर अथवा भगवान मानना अधर्म होता है। ईश्वर एवं भगवान की मूर्तियाँ मनुष्य को भगवान, ईश्वर, परमेश्वर से जुड़ने के लिए प्रेरित कर सकती हैं, किन्तु ईश्वर एवं भगवान की मूर्तियाँ मनुष्य को आध्यात्मिक ज्ञान, भौतिक सुख, मोक्ष, परमेश्वर के दर्शन आदि कुछ भी प्राप्त नहीं करा सकती हैं।

जिस प्रकार मनुष्य को स्वयं का चेहरा देखने के लिए आईने की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार कुछ मनुष्य को भगवान, ईश्वर, एवं परमेश्वर को देखने, जानने, समझने, पूजने, भजने के लिए चित्र एवं मूर्ति की आवश्यकता पड़ती है। परमेश्वर नारायण सर्वव्यापी, असीमित, निराकार होने के कारण मनुष्य को परमेश्वर नारायण की काल्पनिक मूर्ति नहीं बनानी होती है। ईश्वर निराकार किन्तु सीमित होते हैं, भगवान साकार एवं सीमित होते हैं। मनुष्य भगवान, ईश्वर, एवं परमेश्वर को देखने, जानने, समझने, पूजने, भजने के लिए शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७

साकार भगवान और ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ७ निराकार ईश्वर की काल्पनिक मूर्तियां बना सकते हैं।

मनुष्य साकार भगवान और निराकार ईश्वर की मूर्ति को भगवान एवं ईश्वर का प्रतीक मानते हुए भगवान एवं ईश्वर की मूर्ति को नमन कर सकते हैं, भगवान एवं ईश्वर की मूर्ति के सामने बैठकर सत्संग, कीर्तन करते हुए परमेश्वर, ईश्वर एवं भगवान की सतभक्ति कर सकते हैं, किन्तु मनुष्य को भगवान एवं ईश्वर की निर्जीव काल्पनिक मूर्ति को जागृत भगवान एवं जागृत ईश्वर मानकर मूर्तिपूजा बिल्कुल भी नहीं करना है। मूर्तिपूजा अधर्म होने के कारण मूर्तिपूजा करने वाले मनुष्य को पाप एवं घोरपाप की प्राप्ति होती है।

प्रत्येक संस्कृति के विभिन्न सांस्कृतिक चिन्ह और एक सांस्कृतिक झंडा होता है। प्रत्येक मनुष्य को अपनी संस्कृति से नित्य एवं घनिष्ठ संबंध बनाए रखने के लिए अपनी संस्कृति के वास्तुशास्त्र के अनुसार घर, बाड़ा, महल, मंदिर आदि की रचनाएं करनी होती है। अपने घर, परिसर, विद्यालय, मंदिर आदि स्थानों पर सांस्कृतिक चिन्हों को स्थापित करना होता है।

एक परिपूर्ण संस्कृति के लिए संस्कार, नृत्य, संगीत, भाषा, आहार, वेशभूषा, उत्सव, वास्तु आदि ८ तत्वों से परिपूर्ण होना आवश्यक होता है। मनुष्य को अपनी संस्कृति का जतन करने के लिए संस्कृति के किसी भी १ तत्व में योगदान देना होता है।

सनातन धर्म मनुष्य के वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक होता है, संस्कृति मनुष्य के सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक होती है। मनुष्य सामाजिक जीव है, जबतक मनुष्य पारिवारिक एवं सामाजिक बंधनों में बंधा हुआ है, तबतक मनुष्य को संस्कृति के सभी तत्वों का पालन करना आवश्यक होता है।

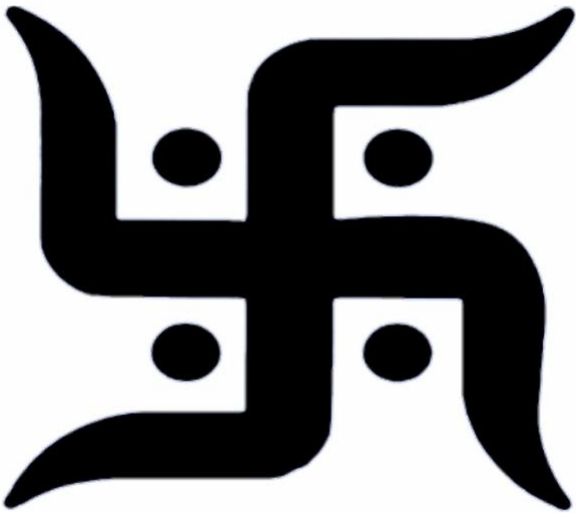
४. धर्म प्रतीक

सनातन धर्म के ज्ञान को परिभाषित करने वाले कुछ विशेष भौतिक पदार्थ एवं चिन्ह को धर्म प्रतीक कहते हैं। स्वास्तिक, धर्मचक्र, श्रीवत्स, कलश, शंख, पीपलवृक्ष, कमल, मछली, कछुआ, हाथी, त्रिरंग, त्रिशूल आदि १२ धर्म प्रतीक हैं। प्रत्येक धर्म प्रतीक सनातन धर्म के विशेष ज्ञान को परिभाषित करता है।

जब तक मनुष्य को धर्म प्रतीक का ज्ञान नहीं होता है, तब तक धर्म प्रतीक मनुष्य के जीवन को प्रभावित नहीं करते हैं। जब मनुष्य को धर्मज्ञान को परिभाषित करने वाले धर्म प्रतीक का ज्ञान होता है, तब मनुष्य को धर्म प्रतीक देखने मात्र से धर्मज्ञान की स्मृति होती रहती है।

मनुष्य को सनातन धर्म के सभी धर्म प्रतीक और उनसे परिभाषित होने वाले धर्मज्ञान को जानना आवश्यक होता है। मनुष्य को प्रतिदिन धर्मज्ञान की स्मृति होती रहे इसके लिए अपने घर, परिसर, विद्यालय एवं मंदिर आदि स्थानों में धर्म प्रतीक स्थापित करने होते हैं।

स्वास्तिक : स्वास्तिक शब्द का अर्थ 'मंगलमय करनेवाला' होता है। ब्राह्मी लिपि ॐ की एक दूसरे के विपरीत मांडणी करते हुए स्वास्तिक चिन्ह की रचना की गई है। ब्राह्मी लिपि ॐ की एक विशेष मांडणी के कारण पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण आदि ४ दिशाओं से स्वास्तिक को देखने पर ॐ नजर आता है। स्वास्तिक की ४ भुजाएँ हैं, प्रत्येक भुजा ॐ को दर्शाती है।



सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग आदि प्रत्येक युग में भिन्न लिपि में ॐ की विशेष मांडणी करते हुए स्वास्तिक की रचना की जाती है। प्रत्येक युग में

स्वास्तिक का चिन्ह भिन्न होता है। कलियुग में ब्राह्मी लिपि ॐ से स्वास्तिक की रचना की गई है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मेरी नवीं आयाम माया है। माया के ध्वनि, स्पर्श, दृश्य, स्वाद, गंध आदि ५ मूलतत्व और अहंकार, आकर्षक, आसक्ति आदि ३ उपतत्व कुल ८ तत्व होते हैं। मैं माया के पहले

तत्त्व ध्वनि से ॐ की उत्पत्ति करता रहता हूँ। ॐ एक प्रथम एवं पवित्र ध्वनि है। प्रत्येक मायारूपी पदार्थ का निर्माण ॐ ध्वनि से शुरू होता है। मनुष्य का शरीर एक मायारूपी पदार्थ है। पुरुष का शुक्राणु जब स्त्री के गर्भ में मौजूद विकसित अंडे में प्रवेश करता है, तब ॐ ध्वनि का नाद होता है।

मनुष्य के जीवन की शुरुआत ॐ ध्वनि से होती है। मनुष्य अपने प्रत्येक शुभ कार्य की शुरुआत ॐ के उच्चारण से कर सकता है। ॐ का प्रतिरूप स्वास्तिक है। मनुष्य को स्वास्तिक चिन्ह दिखते ही ॐ का उच्चारण करना होता है। ॐ की आकृति स्वास्तिक है, स्वास्तिक का उच्चारण ॐ है।

ॐ की ध्वनि सुनने एवं उच्चारण करने से मनुष्य पवित्रता, शांति एवं मंगलमय प्राप्त करता है। ॐ की ध्वनि शुभारंभ एवं मंगलमय कराने वाली होती है, इसलिए ॐ को स्वास्तिक कहते हैं। ॐ अर्थात् स्वास्तिक शुभारंभ, पवित्रता एवं मंगलमय का प्रतीक है।

धर्मचक्र : धर्मचक्र का केंद्र ३ खंड में बटा हुआ है, प्रत्येक खंड के ८ डांडिया है। एक पूर्ण धर्मचक्र



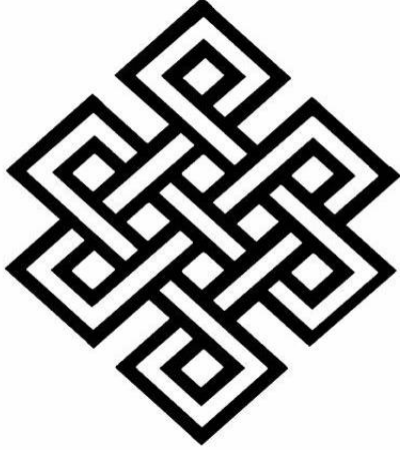
२४ डंडियों वाला है। धर्मचक्र के केंद्र में मौजूद ३ खंड आत्मा, मन, प्राण आदि ३ पिंडऊर्जा के प्रतीक हैं। केंद्र के पहले खंड की ८ डांडिया आत्मा के ८ संस्कार हैं। मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि आत्मा के ८ संस्कार होते हैं।

केंद्र के दूसरे खंड की ८ डांडिया मन की ८ अवस्था हैं। शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद आदि मन की ८ अवस्थाएं होती हैं। केंद्र के तीसरे खंड की ८ डांडिया प्राण के ८ ऊर्जाचक्र

हैं। मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपुर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा, सहस्रार, ब्रह्म आदि प्राण के ८ ऊर्जाचक्र होते हैं।

पूर्ण धर्मचक्र के कुल २४ डांडिया होती हैं, प्रत्येक डंडी आत्मा, मन, प्राण आदि ३ पिंडऊर्जा के एक विशेष गुण को दर्शाती हैं। मन के ८ गुण, धर्म की पूर्ति करते हैं। आत्मा के ८ गुण, अर्थ की पूर्ति करते हैं। प्राण के ८ गुण, काम की पूर्ति करते हैं। मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है।

मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्मचक्र के सभी २४ गुणों को धारण करना है। धर्मचक्र का ज्ञान मनुष्य को मोक्ष की ओर ले जाता है। धर्मचक्र मनुष्य को आत्मा, मन, प्राण, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, परमेश्वर आदि ८ परमतत्व की स्मृति कराता है। धर्मचक्र सनातन धर्मज्ञान का प्रतीक है।



श्रीवत्स : श्रीवत्स यह श्री और वत्स इन २ शब्दों से मिलकर बना है। श्री का अर्थ 'परमेश्वर का प्रिय' होता है, और वत्स का अर्थ 'शिष्य एवं पुत्र' होता है। श्रीवत्स का मूल अर्थ 'परमेश्वर का प्रिय पुत्र' होता है। शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ अमर भगवान स्वयं परमेश्वर नारायण से धर्मज्ञान प्राप्त करते हैं, सभी भगवान परमेश्वर नारायण के प्रिय शिष्य एवं पुत्र के समान होते हैं,

इसलिए शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ अमर भगवान को श्रीवत्स कहा जाता है। श्रीवत्स चिन्ह भगवान का प्रतीक है। भगवान अजर-अमर होते हैं, इसलिए भगवान का प्रतीक श्रीवत्स चिन्ह एक अनंत-मोड़ को दर्शाता है, जिसका आरंभ ही अंत है और अंत ही आरंभ है।

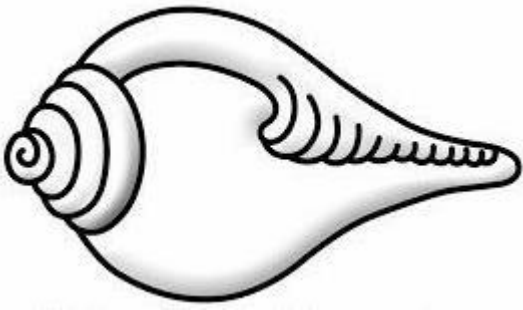


कलश : कलश मनुष्य के जीवनकाल को दर्शाता है। श्रीफल मनुष्य के अर्जित पुण्य को दर्शाता है। प्रत्येक मनुष्य के पास जन्म से एक आध्यात्मिक कलश होता है। मनुष्य को कलश में केवल श्रीफल स्थापित करना है, अर्थात् अपने जीवनकाल में केवल पुण्य अर्जित करते रहना है।

मनुष्य अपने जीवन में जो भी धर्म, अधर्म, पाप, पुण्य करता है, वे सभी कर्म एवं फल आध्यात्मिक कलश में जमा होते रहते हैं। मनुष्य को पूर्ण स्वतंत्रता होती है कि वो अपने आध्यात्मिक कलश में धर्म, अधर्म, पाप, पुण्य जो चाहे जमा कर सकता है। किन्तु मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए अपने आध्यात्मिक कलश में अधिकतम धर्म के अनुसार कर्म करते हुए पुण्य जमा करना अनिवार्य होता है।

जब मनुष्य कलश एवं श्रीफल के आध्यात्मिक स्वरूप को जान पाता है, तब कलश एवं श्रीफल मनुष्य को सदैव अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में अधिकतम पुण्य जमा करने के लिए प्रेरित करते हैं, और अधर्म एवं पाप से दूर रहने के लिए संयम एवं शक्ति प्रदान करते हैं। जिस समय मनुष्य का आध्यात्मिक कलश धर्म, अधर्म, पाप, पुण्य से पूर्णतः भर जाता है, तब मनुष्य का एक जीवनकाल समाप्त होता है, और दूसरा जीवनकाल शुरू होता है। कलश एवं श्रीफल मनुष्य के जीवनकाल एवं पुण्य के प्रतीक हैं।

शंख : शंख नाद की ध्वनि सुनने से मनुष्य के भीतर उत्साह एवं सकारात्मकता उत्पन्न होती है।



मनुष्य को किसी भी कार्य में विजय एवं प्रसिद्धि पाने के लिए उस कार्य को करते समय मनुष्य के भीतर उत्साह एवं सकारात्मकता होनी आवश्यक होती है। शंख नाद की ध्वनि सुनने से मनुष्य को उत्साह, सकारात्मकता, विजय, प्रसिद्धि आदि आध्यात्मिक विषयों की प्राप्ति हो

सकती है। शंख विजय एवं सिद्धि का प्रतीक है।

पीपल वृक्ष : पृथ्वीलोक पर २० लाख विभिन्न प्रजाति के वृक्ष एवं पेड़पौधे उत्पन्न होते हैं। अधिकांश



वृक्ष एवं पेड़पौधे सूर्यप्रकाश की मौजूदगी में श्वसन क्रिया द्वारा वायुमंडल से अप्राणवायु ग्रहण करते हैं, और प्राणवायु छोड़ते हैं, किन्तु सूर्यप्रकाश की गैरमौजूदगी में श्वसन क्रिया द्वारे वायुमंडल से प्राणवायु ग्रहण करते हैं, और अप्राण वायु छोड़ते हैं। अर्थात् अधिकांश वृक्ष एवं पेड़पौधे दिन के प्रकाश में अप्राण वायु ग्रहण करते हुए प्राणवायु वायुमंडल में छोड़ते हैं, इसके विपरीत रात के अंधकार में प्राणवायु ग्रहण करते हुए अप्राणवायु

वायुमंडल में छोड़ते हैं।

एकमात्र पीपल वृक्ष दिन का प्रकाश हो अथवा रात का अंधकार हो सदैव अप्राण वायु ग्रहण करते हुए प्राणवायु वायुमंडल में छोड़ता है। पीपल वृक्ष प्रकाशमय अथवा अंधकारमय आदि किसी भी स्थिति, परिस्थिति में अपना गुणधर्म नहीं बदलता है। सनातन धर्म के नियम एवं सिद्धांत सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलयुग आदि किसी भी युग में नहीं बदलते हैं।

मनुष्य प्रकाशमय अच्छी स्थिति में धर्म का पालन करते हैं, और अधर्म का त्याग करते हैं, इसके विपरीत अंधकारमय बुरी स्थिति में अधर्म का पालन करते हैं, और धर्म का त्याग करते हैं। मनुष्य को प्रकाशमय अच्छी स्थिति हो अथवा अंधकारमय बुरी स्थिति हो सभी स्थिति एवं परिस्थितियों में सदैव एक पीपलवृक्ष के समान अपना धर्म एवं गुणधर्म नहीं बदलना होता है। सदैव धर्म का पालन करना होता है और अधर्म का त्याग करना होता है। पीपलवृक्ष सनातन धर्म का प्रतीक है।

कमल : कमल फूल का पौधा कीचड़ में उत्पन्न होता है। जबतक पौधा कीचड़ के भीतर होता है,

तबतक पौधे पर कमल का फूल उत्पन्न नहीं होता है।

जब कमल फूल का पौधा कीचड़ में से पर्याप्त पोषणतत्व

पाकर कीचड़ से ऊपर उठकर खुले आसमान में साँस

लेता है, तब पौधे पर कमल का फूल उत्पन्न होता है।

मनुष्य का जीवन कमल के पौधे समान होता है।

मनुष्य अज्ञानता एवं अपूर्णता के कारण मोह-माया के

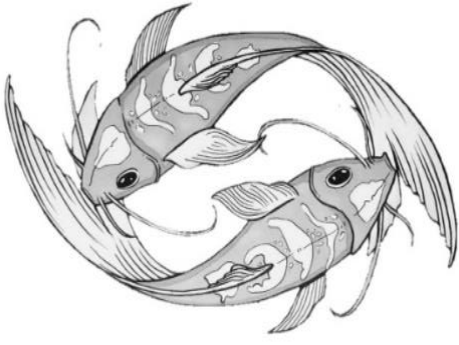
कीचड़ में अपना पूरा जीवन व्यतीत करता है। जब

मनुष्य मोह-माया से ज्ञान की प्राप्ति करते हुए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करता है, तब मनुष्य पूर्णता

प्राप्त करता है। मनुष्य को पूर्णता प्राप्त होने पर मनुष्य मोह-माया के कीचड़ से ऊपर उठता है, और

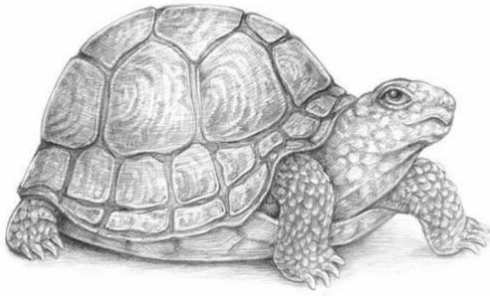
मोक्ष की प्राप्ति करता है। कमल फूल मोक्ष का प्रतीक है।





मछली : पृथ्वीलोक पर प्रत्येक पर्व में जीव की शुरुआत मछली जलचर जीव से होती है। पृथ्वीलोक पर काम एवं प्रेम भाव सर्वप्रथम मछली के मन में उत्पन्न होते हैं। पृथ्वीलोक पर सर्वाधिक कामवासना एक नर मछली के मन में उत्पन्न होती है। पृथ्वीलोक पर सर्वाधिक प्रेमभाव एक मादा मछली के मन में उत्पन्न होती है।

एक विवाहित जीवन को अदभुत एवं आनंदित जीने के लिए मनुष्य के मन में काम एवं प्रेम आदि २ रोमांचक भावों का निरंतर प्रवाह होना आवश्यक होता है। नर एवं मादा २ मछलियों का चिन्ह मनुष्य को काम एवं प्रेम भाव की स्मृति कराते हैं। २ मछलियां काम एवं प्रेम का प्रतीक है।



प्रतीक है।

कछुआ : पृथ्वीलोक पर प्रत्येक पर्व में उभयचर जीव की शुरुआत कछुआ जीव से होती है। पृथ्वीलोक पर मौजूद सभी उभयचर एवं थलचर जीव में एकमात्र कछुआ जीव है, जिसे दीर्घायु प्राप्त है। कछुआ प्रतीक मनुष्य को दीर्घायु एवं स्वास्थ्य जीवन पाने के लिए प्रेरित करता है। कछुआ दीर्घायु का



हाथी : पृथ्वीलोक पर प्रत्येक पर्व में थलचर जीव की शुरुआत हाथी जीव से होती है। पृथ्वीलोक पर मौजूद सभी थलचर जीव में एकमात्र हाथी जीव है, जिसके शरीर एवं मस्तिष्क का आकार विशाल है। पृथ्वीलोक पर मौजूद सभी जीव में एकमात्र हाथी जीव है, जिसके मन में आनंद, साक्षी एवं शांति आदि ३ ईश्वरीय भाव सर्वाधिक उत्पन्न होते हैं। हाथी आनंद, ज्ञान, शांति का प्रतीक है।



है। त्रिरंग पिंडऊर्जा का प्रतीक है।

त्रिरंग : पृथ्वीलोक पर प्रत्येक मनुष्य एक पिंडऊर्जा है। मनुष्य के भीतर आत्मा, मन, प्राण आदि ३ भिन्न पिंडऊर्जा होती है। आत्मा का रंग नीला होता है, मन का रंग पीला होता है, प्राण का रंग लाल होता है। नीला, पीला, लाल आदि ३ रंग के ३ पिंडऊर्जा एकजुट होकर एक पिंडऊर्जा की तरह कार्य करते हैं, इसलिए मनुष्य के भीतर मौजूद आत्मा, मन, प्राण आदि ३ भिन्न पिंडऊर्जा को त्रिरंग कहते



त्रिशूल : त्रिशूल की ऊपरी ३ सिरे सूक्ष्मऊर्जा, पिंडऊर्जा, परमऊर्जा आदि मनुष्य के ३ स्वरूप ऊर्जा आयाम को दर्शाते हैं, त्रिशूल का निचला वर्तुल परमशांति ० आयाम को दर्शाता है। मनुष्य सर्वप्रथम बैकुंठ में सूक्ष्मऊर्जा स्वरूप में होता है। मनुष्य बैकुंठ से पृथ्वीलोक पर अवतरित होने पर पिंडऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है।

मनुष्य पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु, आदि ७ ग्रहलोक पर पिंडऊर्जा स्वरूप में होता है। जब मनुष्य सभी ७ ग्रहलोक पर मोक्ष की प्राप्ति करके बैकुंठ में अवतरित होता है, तब मनुष्य पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य बैकुंठ में सूक्ष्मऊर्जा और परमऊर्जा आदि २ भिन्न स्वरूप में होता है। मनुष्य को सूक्ष्मऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए सभी ७ ग्रहलोक पर पिंडऊर्जा स्वरूप में ७ पिंडजन्म को भोगना होता है।

मनुष्य को बैकुंठ में परममोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को परममुक्ति प्राप्त होती है। मनुष्य को परममोक्ष एवं परममुक्ति प्राप्त होने पर मनुष्य ऊर्जा आयाम से सदैव के लिए मुक्त हो जाता है, और परमशांति आयाम में परिवर्तित हो जाती है। मनुष्य परमशांति आयाम में परिवर्तित होने पर अजर-अमर हो जाता है। त्रिशूल मनुष्य को परमशांति आयाम प्राप्त करने के लिए प्रेरित करता है। त्रिशूल परमशांति आयाम एवं अजर-अमर होने का प्रतीक है।

स्वास्तिक, धर्मचक्र, श्रीवत्स, कलश, शंख, पीपलवृक्ष, कमल, मछली, कछुआ, हाथी, त्रिरंग, त्रिशूल आदि सनातन धर्म के १२ प्रतीक हैं। स्वास्तिक, धर्मचक्र, त्रिशूल, कमल आदि सनातन धर्म के ४ प्रमुख प्रतीक हैं। स्वास्तिक ईश्वर ब्रह्म का प्रतीक है, धर्मचक्र ईश्वर विष्णु का प्रतीक है, त्रिशूल ईश्वर शिव का प्रतीक है, कमल ईश्वर दुर्गा का प्रतीक है।

स्वास्तिक शुभारंभ, पवित्रता, मंगलमय एवं ॐ का प्रतीक है। धर्मचक्र सनातन धर्मज्ञान का प्रतीक है। श्रीवत्स चिन्ह भगवान का प्रतीक है। कलश मनुष्य के जीवनकाल का प्रतीक है। शंख विजय एवं सिद्धि का प्रतीक है। पीपलवृक्ष सनातन धर्म का प्रतीक है। कमल फूल मोक्ष का प्रतीक है। २ मछलियां काम एवं प्रेम का प्रतीक हैं। कछुआ दीर्घायु का प्रतीक है। हाथी आनंद, ज्ञान, एवं शांति का प्रतीक है। त्रिरंग पिंडऊर्जा का प्रतीक है। त्रिशूल परमशांति आयाम एवं अजर-अमर का प्रतीक है।

प्रत्येक मनुष्य का अपना विशेष रंगरूप एवं स्वतंत्र स्वभाव होता है। धर्म प्रतीक किसी एक विशेष रंगरूप के नहीं होते हैं। मनुष्य अपनी पसंद के अनुसार विभिन्न रंगरूप के धर्म प्रतीक अपने घर, परिसर में स्थापित कर सकते हैं। धर्म प्रतीक को देखने से मनुष्य को धर्मज्ञान की स्मृति होती रहती है।

धर्म प्रतीक अपने घर, परिसर में स्थापित करने से मनुष्य को कोई भौतिक विषयों की प्राप्ति नहीं होती है। धर्म प्रतीक अपने घर, परिसर में स्थापित करने से मनुष्य को आध्यात्मिक विषयों की प्राप्ति होती रहती है। धर्म प्रतीक से मनुष्य को धर्म के अनुसार कर्म करने की प्रेरणा एवं धर्मज्ञान की स्मृति प्राप्त होती रहती है।

५. अर्थ

पृथ्वीलोक एक कर्मभूमि है। पृथ्वी पर जन्में प्रत्येक मनुष्य को कर्म करना अनिवार्य होता है। मनुष्य द्वारा कारण एवं अकारण किए जाने वाले शारिरिक क्रियाओं को कर्म कहते हैं। अकर्म, सुकर्म, अर्थ, कुकर्म आदि ४ प्रकार के कर्म होते हैं। मनुष्य को सुकर्म एवं अर्थ आदि २ प्रकार के कर्म करने अनिवार्य होते हैं।

मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्म, अर्थ और काम तीनों की पूर्ति करना अनिवार्य होता है। मनुष्य को अपने सम्पूर्ण जीवनकाल में अर्थ की पूर्ति करने की सर्वाधिक संधि प्राप्त होती है। सभी मनुष्य धर्म एवं काम की तुलना में सर्वाधिक अर्थ की पूर्ति करते हैं। कुछ मनुष्य धर्म का ज्ञान नहीं होने के कारण धर्म की पूर्ति नहीं कर पाते हैं, कुछ मनुष्य काम को घृणास्पद मानकर जानबूझकर काम की पूर्ति नहीं करते हैं, किन्तु सभी मनुष्य अपनी शारिरिक एवं मानसिक जरूरतों की पूर्ति करने के लिए सदैव अर्थ की पूर्ति करते रहते हैं।

जिस कर्म को करने का कोई विशेष कारण नहीं होता है, जिस कर्म को करने से मनुष्य के पाप, पुण्य, धर्म, अधर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, आदि विषयों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, ऐसे कर्म को अकर्म कहते हैं। अज्ञानता में किया हुआ प्रत्येक कर्म सदैव अकर्म होता है। मनुष्य को अकर्म में अपना जीवनकाल व्यर्थ नहीं करना होता है।

जिस कर्म को करना मनुष्य का कर्तव्य होता है, जिस कर्म को करने से सनातन धर्म का पालन होता है, ऐसे कर्म को सुकर्म कहते हैं। सुकर्म से मनुष्य के धर्म पर गहरा प्रभाव पड़ता है। मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्म की पूर्ति होना आवश्यक होता है। सुकर्म करने से मनुष्य के धर्म की पूर्ति होती है। मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए सनातन धर्म की पूर्ति कराने वाले सुकर्म को करना अनिवार्य होता है।

जिस कर्म को करने का एक विशेष कारण अवश्य होता है, जिस कर्म को करने से मनुष्य को पाप-पुण्य की प्राप्ति होती है, जिस कर्म को करने से मनुष्य की शारिरिक एवं मानसिक जरूरतों की पूर्ति होती है, ऐसे कर्म को अर्थ कहते हैं। अर्थ से मनुष्य की आध्यात्मिक शक्तियों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। एक साधारण मनुष्य अत्यधिक अर्थ करने से देवी-देवता अथवा शैतान-चुड़ैल बन जाता है। अर्थ

करने से मनुष्य के पाप-पुण्य में वृद्धि होती है। मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए अर्थ करना अनिवार्य होता है।

जिस कर्म को करना मनुष्य का अहंकार होता है, जिस कर्म को करने से अधर्म एवं अपराध होता है, ऐसे कर्म को कुकर्म कहते हैं। कुकर्म से मनुष्य के पाप में वृद्धि होती है। एक साधारण मनुष्य अत्यधिक कुकर्म करने से शैतान-चुड़ैल बन जाता है। कुकर्म करने वाला प्रत्येक मनुष्य पापी होता है।

पापी मनुष्य को हिंसात्मक दंड देना प्रत्येक शासक एवं धर्मरक्षक का कर्तव्य होता है। कुकर्म करने से मनुष्य को समाज एवं ईश्वर से दंड अवश्य मिलता है। कुकर्म करने से मनुष्य को कभी मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। मनुष्य को किसी भी स्थिति एवं परिस्थिति में कुकर्म नहीं करना है। अधर्म के अनुसार किया हुआ प्रत्येक अर्थ सदैव कुकर्म होता है।

सभी प्रकार के कर्म में सर्वश्रेष्ठ कर्म और दुष्टतम कर्म अर्थ होता है। धर्म के अनुसार किया गया अर्थ सर्वश्रेष्ठ कर्म होता है। अधर्म के अनुसार किया गया अर्थ दुष्टतम कर्म होता है। सुखी, धनी, मानी, कल्याणी आदि ४ प्रकार के अर्थ होते हैं। सुखी, धनी, मानी, आदि ३ प्रकार के अर्थ करने से एक साधारण मनुष्य उत्तम एवं सफल मनुष्य बन सकता है अथवा शैतान-चुड़ैल बन सकता है, किन्तु कल्याणी अर्थ करने से एक साधारण मनुष्य देवी-देवता बन सकता है।

सुखी अर्थ : जिस कर्म को करने से मनुष्य को शक्ति, तृप्ति, प्रेम, सुख, शांति, ज्ञान, आनंद, मुक्ति, आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति होती है, ऐसे कर्म को सुखी अर्थ कहते हैं। स्वयं को शारीरिक एवं मानसिक सुख की अनुभूति देने से मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति के लिए शक्ति, तृप्ति, प्रेम, सुख, शांति, ज्ञान, आनंद, मुक्ति, आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति दिलाने वाले विभिन्न सुखी अर्थ को धर्म के अनुसार नियमित करने होते हैं। धर्म के अनुसार सुखी अर्थ करने पर पुण्य की प्राप्ति होती है, अधर्म के अनुसार सुखी अर्थ करने पर पाप की प्राप्ति होती है।

धनी अर्थ : जिस कर्म को करने से मनुष्य को धन, धान्य, संपत्ति आदि भौतिक विषयों की प्राप्ति होती है, ऐसे कर्म को धनी अर्थ कहते हैं। मनुष्य की सैकड़ों शारीरिक एवं मानसिक जरूरतें होती हैं। अपनी शारीरिक एवं मानसिक जरूरतों की पूर्ति के लिए अच्छे एवं उचित कर्म करने से मनुष्य

को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति के लिए धन, धान्य, संपत्ति आदि भौतिक विषयों की प्राप्ति कराने वाले विभिन्न धनी अर्थ को धर्म के अनुसार नियमित करने होते हैं। धर्म के अनुसार धनी अर्थ करने पर पुण्य की प्राप्ति होती है, अधर्म के अनुसार धनी अर्थ करने पर पाप की प्राप्ति होती है।

मानी अर्थ : जिस कर्म को करने से मनुष्य को मान, सम्मान, प्रसिद्धि, यश, कीर्ति आदि सामाजिक विषयों की प्राप्ति होती है, ऐसे कर्म को मानी अर्थ कहते हैं। मान, सम्मान, प्रसिद्धि, यश, कीर्ति आदि सामाजिक विषयों की प्राप्ति करने से मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति के लिए मान, सम्मान, प्रसिद्धि, यश, कीर्ति आदि सामाजिक विषयों की प्राप्ति कराने वाले विभिन्न मानी अर्थ को धर्म के अनुसार नियमित करने होते हैं। धर्म के अनुसार मानी अर्थ करने पर पुण्य की प्राप्ति होती है, अधर्म के अनुसार मानी अर्थ करने पर पाप की प्राप्ति होती है।

कल्याणी अर्थ : जिस कर्म को करने से परिवार, समाज, देश, पशुपक्षी, एवं प्रकृति आदि मानवीय एवं प्राकृतिक विषयों का कल्याण होता है, ऐसे कर्म को कल्याणी अर्थ कहते हैं। परिवार का कल्याण, समाज का कल्याण, देश का कल्याण, पशुपक्षी का कल्याण, पेड़पौधों का कल्याण, पर्यावरण का कल्याण, प्रकृति का कल्याण आदि किसी का भी मानवीय एवं प्राकृतिक विषयों का कल्याण करने से मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति के लिए परिवार, समाज, देश, पशुपक्षी, एवं प्रकृति आदि मानवीय एवं प्राकृतिक विषयों का कल्याण कराने वाले विभिन्न कल्याणी अर्थ को धर्म के अनुसार नियमित करने होते हैं। धर्म के अनुसार कल्याणी अर्थ करने पर परमपुण्य की प्राप्ति होती है, अधर्म के अनुसार कल्याणी अर्थ करने पर पाप की प्राप्ति होती है।

६. कर्मा

पृथ्वीलोक एक कर्मभूमि है। पृथ्वी पर जन्में प्रत्येक मनुष्य को कर्म करना अनिवार्य है। कर्म करने के लिए प्राणऊर्जा द्वारा मनुष्य के मन में कारण उत्पन्न होता है, कारण की पूर्ति के लिए मनुष्य क्रिया, प्रतिक्रिया करता है, मनुष्य द्वारा क्रिया, प्रतिक्रिया होने पर मनुष्य को परिणाम प्राप्त होते हैं। कारण उत्पन्न होने पर क्रिया घटित होती है, क्रिया घटित होने पर परिणाम प्राप्त होता है। कारण, क्रिया, एवं परिणाम एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। कारण एवं क्रिया की पूर्ति होने पर प्राप्त होने वाले परिणाम को कर्मा कहते हैं।

मार्गी कर्मा और वक्री कर्मा आदि २ प्रकार के कर्मा होते हैं। मनुष्य को स्वयं की शारिरिक एवं मानसिक क्रिया द्वारा प्राप्त होने वाले परिणाम को मार्गी कर्मा कहते हैं। मनुष्य को किसी अन्य मनुष्य, पशुप्राणि, प्रकृति के क्रिया द्वारा प्राप्त होने वाले परिणाम को वक्री कर्मा कहते हैं। अधिकतर मार्गी कर्मा तत्काल प्राप्त होते हैं। अधिकतर वक्री कर्मा दीर्घकाल के बाद प्राप्त होते हैं। मनुष्य को प्रत्येक क्रिया का परिणाम अवश्य प्राप्त होता है। कुछ क्रियाओं का परिणाम तत्काल प्राप्त होता है, कुछ क्रियाओं का परिणाम दीर्घकाल के बाद प्राप्त होता है।

मनुष्य के शरीर के भीतर मौजूद प्राणऊर्जा द्वारा मनुष्य के मन में कर्म करने के लिए निरंतर असंख्य कारण उत्पन्न होते रहते हैं। कुछ कारण धर्म के अनुकूल होते हैं, कुछ कारण धर्म के विपरीत होते हैं। मनुष्य को साक्षी एवं प्रज्ञा भाव से मन में उत्पन्न होने वाले विभिन्न कारणों को जानना, समझना आवश्यक होता है। जब मनुष्य धर्म के अनुकूल कारण की पूर्ति के लिए शारिरिक एवं मानसिक क्रिया करता है, तब मनुष्य को प्राप्त होने वाले कर्मा से पुण्य में वृद्धि होती है। जब मनुष्य धर्म के विपरीत कारण की पूर्ति के लिए शारिरिक एवं मानसिक क्रिया करता है, तब मनुष्य को प्राप्त होने वाले कर्मा से पाप में वृद्धि होती है।

मनुष्य के मन में असंख्य कारण उत्पन्न होते रहते हैं, किन्तु मनुष्य को केवल धर्म के अनुकूल कारण को स्वीकार करना होता है, और धर्म के विपरीत कारण का त्याग करना होता है। मनुष्य जिस कारण को स्वीकार करता है, मनुष्य उस कारण से संबंधित क्रिया करता है। मनुष्य की क्रिया को कर्म कहते हैं, कर्म के परिणाम को कर्मा कहते हैं। जब मनुष्य अच्छा कर्म करता है, तब मनुष्य को अच्छा कर्मा

प्राप्त होता है। जब मनुष्य बुरा कर्म करता है, तब मनुष्य को बुरा कर्मा प्राप्त होता है। मनुष्य को प्राप्त होने वाले अच्छे कर्मा अथवा बुरे कर्मा दोनों के लिए मनुष्य के स्वयं के कर्म जिम्मेदार होते हैं।

मनुष्य के वर्तमान कर्म के कर्मा मार्गी स्वरूप में तत्काल प्राप्त होते हैं। मनुष्य के भूतकाल कर्म के कर्मा वक्री स्वरूप में दीर्घकाल के बाद प्राप्त होते हैं। मनुष्य को प्रत्येक कर्म का कर्मा अवश्य प्राप्त होता है। मनुष्य का पुनर्जन्म पूर्णतः वक्री कर्मा पे आधारित होता है। मनुष्य का सौभाग्य एवं दुर्भाग्य पिछले जन्म के वक्री कर्मा होते हैं।

मनुष्य जिस कर्मा को प्राप्त करने की अपेक्षा से जो कर्म करता है, मनुष्य को उस कर्म से अपेक्षित कर्मा कभी प्राप्त नहीं होता है। मनुष्य जैसा कर्म करता है, मनुष्य को वैसा कर्मा प्राप्त होता है, इसलिए मनुष्य को एक निश्चित कर्मा की कोई अपेक्षा ना करते हुए केवल कर्म पर ध्यान केंद्रित करना है।

कुछ कर्म का परिणाम उस समान कर्म के पूरा होने पर प्राप्त होते हैं। कुछ कर्म का परिणाम किसी अन्य कर्म के पूरा होने पर प्राप्त होते हैं। मनुष्य को समान कर्म से प्राप्त होने वाले परिणाम को मार्गी कर्मा कहते हैं। मनुष्य को किसी एक कर्म का परिणाम किसी अन्य कर्म द्वारा प्राप्त होने को वक्री कर्मा कहते हैं।

कारण एवं क्रिया मनुष्य के नियंत्रण में होते हैं, कर्मा पूर्णतः ईश्वर विष्णु के नियंत्रण में होता है। मनुष्य को सोच, समझकर उचित कारण को स्वीकार करना होता है, क्योंकि केवल उचित कारण से उचित क्रिया घटित हो सकती है। मनुष्य द्वारा उचित अथवा अनुचित क्रिया घटित होने पर ईश्वर विष्णु द्वारा मनुष्य को उचित अथवा अनुचित कर्मा प्राप्त होता है।

७. पाप-पुण्य

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने समय, स्थान, ऊर्जा आदि ३ आयामों से मनुष्य की उत्पत्ति की है। समय मनुष्य का जीवन है। स्थान मनुष्य का शरीर है। ऊर्जा मनुष्य स्वयं है। मनुष्य का सम्पूर्ण जीवन समय के अनुसार घटित होता है। मनुष्य को समय से पहले और समय के बाद कुछ प्राप्त नहीं होता है, सब कुछ एक निश्चित समय पर प्राप्त होता है। प्रत्येक मनुष्य समय के बंधन में बंधा हुआ है।

मनुष्य का शरीर एक यंत्र है। मनुष्य शरीर नहीं है। मनुष्य को विभिन्न कर्म करने और पाप-पुण्य भोगने के लिए शरीर प्राप्त हुआ है। जिस प्रकार स्थान के बिना ऊर्जा का कोई अस्तित्व नहीं होता है, उसी प्रकार शरीर के बिना मनुष्य का कोई अस्तित्व नहीं होता है। मनुष्य को प्रत्येक जीवन एवं प्रत्येक ग्रहलोक पर एक नया शरीर प्राप्त होता है।

ऊर्जा सदैव चलायमान होती है, और ऊर्जा को चलायमान रहने के लिए शरीर की आवश्यकता होती है। मनुष्य का शरीर अपने भीतर मौजूद पिंडऊर्जा और आभामंडल में मौजूद आभाऊर्जा आदि विभिन्न ऊर्जा से प्रभावित होकर विभिन्न शारिरिक क्रिया करता रहता है।

मनुष्य के शरीर के भीतर आत्मा, मन, प्राण आदि ३ पिंडऊर्जा होती है। आत्मा मनुष्य के शारिरिक कर्म एवं मानसिक विचारों को साक्षी भाव से देखती रहती हैं। आत्मा पृथ्वी के आभामंडल में मौजूद सकारात्मक एवं नकारात्मक आभा-ऊर्जा को ग्रहण करके मनुष्य के मन का विस्तार एवं संकुचन करती है। मन मनुष्य स्वयं होता है। मनुष्य जिसे मैं कहता हूँ, वह उसका मन ही होता है। मनुष्य अपने जीवन में जो भी प्राप्त करता है, उसके लिए मनुष्य का मन ही कारणीभूत होता है। प्राण मनुष्य के मन, आत्मा, और शरीर को चलायमान रखता है। प्राण के कारण मनुष्य के शरीर का विस्तार एवं संकुचन होता है।

पुण्य : मनुष्य को बैकुंठ में परमसत्य जीवन प्राप्त करने के लिए पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि सभी ७ ग्रहलोक पर सकारात्मक आभा-ऊर्जा को ग्रहण करते हुए अपने मन का पर्याप्त विस्तार करना अनिवार्य होता है। मनुष्य के मन का पर्याप्त विस्तार होने पर ही मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य के मन का विस्तार करने वाली सकारात्मक आभा-ऊर्जा को पुण्य कहते हैं। जबतक सकारात्मक आभा-ऊर्जा पृथ्वी के आभामंडल में मौजूद होती है, तबतक वह एक सकारात्मक

आभा-ऊर्जा होती है, जब सकारात्मक आभाऊर्जा मनुष्य की आत्मा द्वारा मनुष्य के शरीर में प्रवेश करती है, तब वह पुण्य में परिवर्तित हो जाती है।

मनुष्य का मन स्वयं सकारात्मक आभा-ऊर्जा अर्थात् पुण्य को ग्रहण नहीं कर सकता है। मनुष्य की आत्मा मनुष्य का मन शून्य अवस्था में होने पर पृथ्वी की आभामंडल से सकारात्मक आभा-ऊर्जा ग्रहण करती है, और जब मनुष्य का मन चेतन अवस्था में होता है, तब सकारात्मक आभाऊर्जा को पुण्य में परिवर्तित करती है।

मनुष्य की आत्मा मनुष्य के कर्म के अनुसार उचित पुण्य ग्रहण करती है और ग्रहण किए गए पुण्य से मनुष्य के मन का विस्तार करती है। मनुष्य धर्म के अनुसार अर्थ की पूर्ति करते हुए पुण्य की प्राप्ति कर सकता है। मनुष्य जितना ज्यादा पुण्य की प्राप्ति करता है, उतना ज्यादा मनुष्य के मन का विस्तार होता है।

मनुष्य को केवल अर्थ करने से पुण्य की प्राप्ति होती है। स्वयं को सुख, शांति, आनंद, प्रेम की अनुभूति दिलाने के लिए धर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् सुखी-अर्थ से पुण्य की प्राप्ति होती है। धन, धान्य, संपत्ति की प्राप्ति के लिए धर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् धनी-अर्थ से पुण्य की प्राप्ति होती है।

मान, सम्मान, प्रसिद्धि की प्राप्ति के लिए धर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् मानी-अर्थ से पुण्य की प्राप्ति होती है। परिवार, समाज, देश, पशुपक्षी, पेड़पौधे, एवं प्रकृति के कल्याण के लिए धर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् कल्याणी-अर्थ से परमपुण्य की प्राप्ति होती है।

मनुष्य पुण्य और परमपुण्य आदि २ प्रकार के पुण्य की प्राप्ति करता है। मनुष्य धर्म के अनुसार स्वार्थ भाव से जो अर्थ करता है, उससे मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य धर्म के अनुसार निःस्वार्थ भाव से जो अर्थ करता है, उससे मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य पाप एवं अधर्म करने पर पुण्य का नाश होता है, किन्तु मनुष्य पाप एवं अधर्म करने पर परमपुण्य का नाश नहीं होता है। मनुष्य एक बार परमपुण्य की प्राप्ति करता है, वह परमपुण्य शाश्वत रहता है।

मनुष्य के मन को पुण्य की प्राप्ति होने पर पुण्य की प्रतिक्रिया में मनुष्य के मन में मुक्ति, तृप्ति, भक्ति, आनंद, शांति, सुख, प्रेम, शक्ति आदि ईश्वरीय भाव उत्पन्न होते हैं। जिस समय मनुष्य मुक्ति, तृप्ति, भक्ति, आनंद, शांति, सुख, प्रेम, शक्ति आदि ईश्वरीय भावों की अनुभूति कर रहा होता है, उस समय उन ईश्वरीय भावों के सक्रिय होने से मन का विस्तार होता रहता है। मनुष्य को अपने मन का अधिक

विस्तार करने के लिए मन में उत्पन्न हुए ईश्वरीय भाव की अधिक समय तक अनुभूति लेते रहना होता है।

मुक्ति, तृप्ति, भक्ति, आनंद, शांति, सुख, प्रेम, शक्ति आदि ईश्वरीय भाव पुण्य से मिलने वाले कर्मा स्वरूप होते हैं, इन ईश्वरीय भावों को 'पुण्य का कर्मा' कहते हैं। मनुष्य को धर्म एवं अधर्म का सम्पूर्ण ज्ञान लेना आवश्यक होता है, जिससे मनुष्य धर्म के अनुसार कर्म करते हुए अधिक से अधिक पुण्य की प्राप्ति कर सकता है, और अधर्म का त्याग करके अनजाने में भी पाप की प्राप्ति नहीं कर सकता है।

पाप : मनुष्य की आत्मा मनुष्य के कर्म के अनुसार पृथ्वी के आभामंडल में मौजूद सकारात्मक आभा-ऊर्जा एवं नकारात्मक आभा-ऊर्जा ग्रहण करके मनुष्य के मन का विस्तार एवं संकुचन करती है। मनुष्य के मन का संकुचन करने वाली नकारात्मक आभा-ऊर्जा को पाप कहते हैं। जबतक नकारात्मक आभा-ऊर्जा पृथ्वी के आभामंडल में मौजूद होती है, तबतक वह एक नकारात्मक आभा-ऊर्जा होती है, जब नकारात्मक आभा-ऊर्जा मनुष्य की आत्मा द्वारा मनुष्य के शरीर में प्रवेश करती है, तब वह पाप में परिवर्तित हो जाती है।

मनुष्य की आत्मा मनुष्य का मन शून्य अवस्था में होने पर पृथ्वी की आभामंडल से नकारात्मक आभा-ऊर्जा ग्रहण करती है, और जब मनुष्य का मन चेतन अवस्था में होता है, तब नकारात्मक आभा-ऊर्जा को पाप में परिवर्तित करती है। मनुष्य की आत्मा मनुष्य के कुकर्म के अनुसार उचित पाप ग्रहण करती है और ग्रहण किए गए पाप से मनुष्य के मन का संकुचन करती है। मनुष्य को अधर्म के अनुसार अर्थ की पूर्ति करने से पाप की प्राप्ति होती है। मनुष्य जितना ज्यादा पाप की प्राप्ति करता है, उतना ज्यादा मनुष्य के मन का संकुचन होता है।

मनुष्य को अर्थ करने से पाप एवं पुण्य की प्राप्ति होती है। स्वयं को सुख, शांति, आनंद, प्रेम की अनुभूति दिलाने के लिए अधर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् सुखी-अर्थ से पाप की प्राप्ति होती है। धन, धान्य, संपत्ति की प्राप्ति के लिए अधर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् धनी-अर्थ से पाप की प्राप्ति होती है।

मान, सम्मान, प्रसिद्धि की प्राप्ति के लिए अधर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कर्म अर्थात् मानी-अर्थ से पाप की प्राप्ति होती है। परिवार, समाज, देश, पशुपक्षी, पेड़पौधे, एवं प्रकृति के विनाश के लिए अधर्म के अनुसार किए गए विभिन्न कुकर्म से घोरपाप की प्राप्ति होती है।

मनुष्य पाप और घोरपाप आदि २ प्रकार के पाप की प्राप्ति करता है। मनुष्य अधर्म के अनुसार स्वार्थ भाव से जो अर्थ करता है, उससे मनुष्य को पाप की प्राप्ति होती है। मनुष्य अधर्म के अनुसार क्रूरता भाव से जो कुकर्म करता है, उससे मनुष्य को घोरपाप की प्राप्ति होती है।

पाप की प्राप्ति करने पर मनुष्य के पुण्य का नाश होता है, किन्तु घोरपाप की प्राप्ति करने पर मनुष्य को असह्य शारीरिक एवं मानसिक दर्द पीड़ा भोगनी पड़ती है। घोरपाप का नाश नहीं होता है। मनुष्य एक बार घोरपाप की प्राप्ति करता है, उसे असह्य शारीरिक एवं मानसिक दर्द पीड़ा भोगनी ही पड़ती है। अत्यधिक घोरपाप करने वाले मनुष्य को निश्चित ही मुक्ति एवं मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसे मनुष्य को मुक्ति एवं मोक्ष की प्राप्ति के लिए पुनर्जन्म लेना ही पड़ता है।

मनुष्य के मन को पाप की प्राप्ति होने पर पाप की प्रतिक्रिया में मनुष्य के मन में अतृप्ति, अशांति, दुख, दर्द, अहंकार, क्रोध, भय, ईर्ष्या आदि शैतानी भाव उत्पन्न होते हैं। जिस समय मनुष्य अतृप्ति, अशांति, दुख, दर्द, अहंकार, क्रोध, भय, ईर्ष्या आदि शैतानी भावों की अनुभूति कर रहा होता है, उस समय उन शैतानी भावों के सक्रिय होने से मन का संकुचन होता रहता है।

मनुष्य को अपने मन का अधिक संकुचन होने से रोकने के लिए मन में उत्पन्न हुए शैतानी भाव को तुरंत नियंत्रित एवं समाप्त करना होता है। अतृप्ति, अशांति, दुख, दर्द, अहंकार, क्रोध, भय, ईर्ष्या आदि शैतानी भाव पाप से मिलने वाले कर्मा स्वरूप होते हैं, इन शैतानी भावों को 'पाप का कर्मा' कहते हैं।

सभी ग्रहलोक पर मनुष्य जन्म से अज्ञानी होता है। भगवान भी जब मनुष्य के रूप में पृथ्वी पर अवतरित होते हैं, तब भगवान भी जन्म से अज्ञानी होते हैं। भगवान एवं मनुष्य जबतक धर्म एवं अधर्म का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं करते हैं, तब तक अज्ञानता के कारण माया से प्रभावित होकर धर्म एवं अधर्म दोनों प्रकार के कर्म करते हैं। अधर्म के अनुसार किया गया प्रत्येक कर्म पाप उत्पन्न करता है।

भगवान का मन अजर-अमर होता है। भगवान को अपने मूल निवासस्थान बैकुंठ एवं अन्य ग्रहलोक पर अवतरित होने के लिए मोक्ष प्राप्ति की आवश्यकता नहीं होती है, और अपने मन का विस्तार करने की भी कोई आवश्यकता नहीं होती है, इसलिए भगवान पर पाप, पुण्य, धर्म, अधर्म का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

मनुष्य में अज्ञानता के कारण सूक्ष्म मात्रा में पाप उत्पन्न होता है। पृथ्वीलोक एवं अन्य सभी ग्रहलोक पर सभी मनुष्य में पाप उत्पन्न होता ही है। केवल बैकुंठ में मनुष्य में पाप उत्पन्न नहीं होता है। बैकुंठ में जीवन पाने वाला मनुष्य जन्म से परमज्ञानी होता है। मनुष्य को पृथ्वीलोक एवं अन्य सभी ग्रहलोक पर अपनी बाल अवस्था से ही धर्म एवं अधर्म का सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त करना होता है, ताकि किशोरावस्था से मृत्यु तक मनुष्य किसी भी प्रकार का पाप प्राप्त ना कर सके।

मनुष्य सभी पापों से मुक्त होने पर ही मोक्ष की प्राप्ति कर पाता है। मनुष्य केवल अपने पुण्य से अपने पापों का नाश कर सकता है। मनुष्य के स्वयं के पुण्य के अलावा भगवान, ईश्वर, एवं स्वयं परमेश्वर भी मनुष्य के पापों का नाश नहीं कर सकते हैं।

मनुष्य को अपने सभी पापों से मुक्त होने के लिए अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति करनी होती है। मनुष्य को अत्यधिक पुण्य प्राप्त होने पर मनुष्य के पाप का नाश होता है, और मनुष्य के मन का पर्याप्त विस्तार होता है। मनुष्य के मन का पर्याप्त विस्तार होने से, और सभी पापों का नाश होने से मनुष्य को मोक्ष की पात्रता प्राप्त होती है।

८. भक्ति

मनुष्य के भीतर ६५ विभिन्न भाव उत्पन्न होते हैं, उनमें से एक भक्ति भाव होता है। भक्ति भाव सहस्रार चक्र में उत्पन्न होता है। भक्ति एकमात्र ऐसा भाव है, जिसकी अनुभूति होने पर मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है। प्रेम की परम अवस्था को भक्ति कहते हैं। प्रेम का गुणधर्म सेवा होता है। भक्ति का गुणधर्म परमसेवा होता है।

प्रेम एवं सेवा साकार स्वरूप होती है। भक्ति एवं परमसेवा निराकार स्वरूप होती है। प्रेम सदैव साकार स्वरूप भौतिक विषयों से जुड़ा होता है, इसलिए मनुष्य केवल एक जीवित मनुष्य, पशुपक्षी एवं भौतिक प्रकृति से प्रेम कर सकता है। भक्ति सदैव निराकार स्वरूप आध्यात्मिक विषयों से जुड़ी होती है, इसलिए मनुष्य केवल भगवान, ईश्वर एवं परमेश्वर की भक्ति कर सकता है।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ७ ईश्वर हैं। शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि ७ भगवान हैं। मनुष्य द्वारा परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान आदि किसी की भी भक्ति करने पर वो भक्ति परमेश्वर नारायण को ही प्राप्त होती है। मनुष्य जिस भगवान, ईश्वर, परमेश्वर की भक्ति करता है, उसकी परमसेवा करने और उसका नाम स्मरण करने पर मनुष्य को भक्तिभाव की अनुभूति होती है।

मनुष्य के भीतर सतगुण, रजगुण, तमगुण आदि ३ प्रकार के गुणधर्म होते हैं। मनुष्य एक विशेष गुणधर्म के अनुसार सतभक्ति, रजभक्ति, तमभक्ति आदि ३ प्रकार की भक्ति करता है। मनुष्य को केवल सतभक्ति से परमपुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य को रजभक्ति से पाप एवं पुण्य दोनों की प्राप्ति होती है। मनुष्य को तमभक्ति से पाप एवं घोरपाप की प्राप्ति होती है।

सतभक्ति : निस्वार्थ भाव से परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान की परमसेवा करने के लिए की जाने वाली भक्ति को सतभक्ति कहते हैं। सत्संग द्वारा धर्मज्ञान का प्रचार करना और कीर्तन द्वारा परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान का धन्यवाद करना, यही परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान की परमसेवा होती है। जो मनुष्य सत्संग एवं कीर्तन द्वारा भक्ति भाव की अनुभूति करता है, ऐसा मनुष्य सतभक्ति प्राप्त करता है। सतभक्ति से मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है।

रजभक्ति : स्वार्थ भाव से परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से आध्यात्मिक एवं अभौतिक विषयों की मांग के लिए की जाने वाली भक्ति को रजभक्ति कहते हैं। आनंद, सुख, शांति, प्रेम, सफलता, समृद्धि आदि आध्यात्मिक एवं अभौतिक विषयों की प्राप्ति के लिए मनुष्य सत्संग, कीर्तन के साथ अन्य कर्मकांड भी करता है। उपवास, व्रत, आदि कोई भी कर्मकांड करना अधर्म होता है। जो मनुष्य सत्संग, कीर्तन एवं कर्मकांड द्वारा भक्ति भाव की अनुभूति करता है, ऐसा मनुष्य रजभक्ति प्राप्त करता है। रजभक्ति करनेवाला मनुष्य धर्म एवं अधर्म दोनों प्रकार के कर्म करता है, इसलिए रजभक्ति से मनुष्य को पाप एवं पुण्य दोनों की प्राप्ति होती है।

तमभक्ति : स्वार्थ भाव से परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से भौतिक विषयों की मांग के लिए की जाने वाली भक्ति को तमभक्ति कहते हैं। धन, धान्य, आधुनिक संसाधन, संतान, संपत्ति, आदि भौतिक विषयों की प्राप्ति के लिए मनुष्य मूर्तिपूजा एवं कर्मकांड करता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान की मूर्तिपूजा करना अधर्म होता है। कर्मकांड के नाम पर परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को भेटवस्तु देने की चेष्टा करना अधर्म होता है। जो मनुष्य मूर्तिपूजा एवं कर्मकांड द्वारा भक्ति भाव की अनुभूति करता है, ऐसा मनुष्य तमभक्ति प्राप्त करता है। तमभक्ति करनेवाला मनुष्य अधर्म ही अधर्म करता है, इसलिए तमभक्ति से मनुष्य को पाप एवं घोरपाप दोनों की प्राप्ति होती है।

जो मनुष्य आध्यात्मिक अज्ञानता के कारण नास्तिक होता है, ऐसा मनुष्य भक्ति भाव की अनुभूति नहीं कर पाता है, ऐसा मनुष्य भक्ति द्वारा मिलने वाले पाप एवं पुण्य को भी प्राप्त नहीं करता है। जो मनुष्य रजभक्ति एवं तमभक्ति की अनुभूति करता है, ऐसा मनुष्य पाप एवं घोरपाप को प्राप्त करता है। रजभक्ति एवं तमभक्ति मनुष्य से अधर्म करवाती है, इसलिए मनुष्य को रजभक्ति एवं तमभक्ति का बहिष्कार करना होता है। मनुष्य को रजभक्ति एवं तमभक्ति द्वारा अधर्म करने से रोकना प्रत्येक धर्मरक्षक एवं धर्मगुरु का कर्तव्य होता है।

मनुष्य को भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों की प्राप्ति के लिए कर्म करना अनिवार्य होता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से बिना कर्म किए किसी भी भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों की मांग करना मूर्खता एवं अधर्म होता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान किसी भी मनुष्य को बिना कर्म किए कुछ भी नहीं देते हैं। मनुष्य अपने जीवन में जो भी प्राप्त करता है, अपने कर्म एवं भाग्य से प्राप्त करता है। पूर्वजन्म के कर्म के कर्मा को भाग्य कहते हैं।

मनुष्य को परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से केवल ज्ञान की प्राप्ति होती है। मनुष्य को धर्म, अर्थ एवं काम की पूर्ति करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। मनुष्य को धन, संपत्ति, सम्मान, प्रसिद्धि आदि सभी भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों की प्राप्ति के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। मनुष्य को किसी भी प्रकार के कर्म को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है।

परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से ज्ञान के अलावा किसी अन्य विषयों की मांग करना अधर्म होता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से भौतिक विषयों की मांग के लिए प्रार्थना करना मूर्खता होती है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को प्रसन्न करने के लिए मूर्तिपूजा करना अधर्म होता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को प्रसन्न करने के लिए भेटवस्तु देना मूर्खता होती है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को प्रसन्न करने के लिए भूखा प्यासा रहकर उपवास रखना अधर्म होता है। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को प्रसन्न करने के लिए स्वयं को शारीरिक दर्द पीड़ा देना अधर्म होता है।

पृथ्वीलोक पर मौजूद अधिकांश भौतिक पदार्थ समय, स्थान, ऊर्जा आदि केवल ३ आयामों से निर्मित हुए हैं। बैकुंठ में मौजूद अधिकांश भौतिक पदार्थ शांति, समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ९ आयामों से निर्मित हुए हैं। परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को अति प्रिय ऐसा कोई एक भी भौतिक पदार्थ पृथ्वीलोक पर मौजूद नहीं है।

स्तुति, ज्ञान एवं सेवा आदि मनुष्य की ३ पवित्र क्रियाएं हैं, जो परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान को अति प्रिय होती हैं। जब मनुष्य किसी अन्य मनुष्य एवं भगवान की स्तुति कर रहा होता है, तब परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान प्रसन्न होते हैं। जब मनुष्य भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर रहा होता है, अथवा ज्ञान बांट रहा होता है, तब परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान प्रसन्न होते हैं। जब मनुष्य प्रेम भाव से किसी अन्य मनुष्य, पशुपक्षी, समाज, देश, प्रकृति की सेवा कर रहा होता है, तब परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान प्रसन्न होते हैं।

सतभक्ति के कीर्तन एवं सत्संग आदि २ अंग होते हैं। मनुष्य कीर्तन द्वारा भगवान, देवी-देवता, एवं समाजसुधारक की स्तुति करता है, मनुष्य सत्संग द्वारा धर्मज्ञान प्राप्त करता है। मनुष्य सत्संग, कीर्तन का आयोजन करते हुए समाजसेवा करता है। सतभक्ति एकमात्र ऐसी क्रिया है, जिससे मनुष्य द्वारा स्तुति, ज्ञान, सेवा आदि ३ पवित्र क्रियाएं संपन्न होती हैं। मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति करने और परमेश्वर, ईश्वर, एवं भगवान से जुड़ने के लिए सत्संग, कीर्तन करते हुए केवल सतभक्ति करनी है।

९. आस्तिक-नास्तिक

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैं परमशांति आयाम में स्थित हूँ। मैंने अपने भीतर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ८ विभिन्न आयामों से समस्त ब्रह्मांड, बैकुंठ का निर्माण किया है। मैंने समस्त जीव, मनुष्य, ब्रह्मांड, बैकुंठ आदि सभी आयामों को चलायमान रखने के लिए ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ७ ईश्वर को उत्पन्न किया है।

मैंने पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर मौजूद मनुष्य को सनातन धर्मज्ञान देने शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि ७ भगवान को बैकुंठ में उत्पन्न किया है। जो मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को पूर्णतः स्वीकारता है, ऐसे मनुष्य को आस्तिक कहते हैं। जो मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को पूर्णतः नकारता है, ऐसे मनुष्य को नास्तिक कहते हैं।

आस्तिक : ज्ञानी और अज्ञानी आदि २ प्रकार के आस्तिक होते हैं। जो मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के भेद को जानता, समझता है, परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के विभिन्न कार्यों को जानता है, परमेश्वर सदैव उन्हें देख रहे हैं, यह मानता है, ऐसे मनुष्य को ज्ञानी आस्तिक कहते हैं। जो मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के भेद को जाने बिना परमेश्वर को ईश्वर, ईश्वर को भगवान, भगवान को परमेश्वर मानता है, परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के विभिन्न कार्यों को नहीं जानता है, परमेश्वर सदैव उन्हें देख रहे हैं, यह भूल जाता है, किसी मूर्ख मनुष्य की नकल करते हुए देवी-देवता, शैतान-चुड़ैल आदि मनुष्य को परमेश्वर, ईश्वर, भगवान मानता है, ऐसे मनुष्य को अज्ञानी आस्तिक कहते हैं।

ज्ञानी आस्तिक सत्संग, कीर्तन द्वारा परमेश्वर, ईश्वर, भगवान की सतभक्ति करता है। ज्ञानी आस्तिक बिना किसी मांग के परमेश्वर, ईश्वर, भगवान की सतभक्ति करता है। अज्ञानी आस्तिक देवी-देवता, शैतान-चुड़ैल आदि मनुष्य को परमेश्वर, ईश्वर, भगवान मानकर मूर्तिपूजा, कर्मकांड द्वारा तमभक्ति करता है। अज्ञानी आस्तिक भौतिक एवं अभौतिक विषयों की मांग के लिए देवी-देवता, शैतान-चुड़ैल की तमभक्ति करता है। ज्ञानी आस्तिक द्वारा परमेश्वर, ईश्वर, भगवान आदि किसी की भी सतभक्ति करने पर वो भक्ति परमेश्वर नारायण को प्राप्त होती है। अज्ञानी आस्तिक द्वारा देवी-देवता, शैतान-चुड़ैल, गुरु आदि मनुष्य की तमभक्ति करने पर वो भक्ति परमेश्वर नारायण को प्राप्त नहीं होती है।

ज्ञानी आस्तिक को सतभक्ति के परिणामस्वरूप ईश्वर द्वारा पुण्य एवं परमपुण्य की प्राप्ति होती है। अज्ञानी आस्तिक को तमभक्ति के परिणामस्वरूप ईश्वर द्वारा पाप एवं घोरपाप की प्राप्ति होती है।

नास्तिक : नास्तिक और अपूर्ण नास्तिक आदि २ प्रकार के नास्तिक होते हैं। जो मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को पूर्णतः नकारता है, जो मनुष्य केवल भौतिक विषयों पर विश्वास करता है, और अभौतिक विषयों को पूर्णतः नकारता है, ऐसा मनुष्य नास्तिक होता है। जो मनुष्य ईश्वर एवं भगवान के अस्तित्व को पूर्णतः नकारता है, किन्तु एक परमेश्वर के अस्तित्व को स्वीकारता है, जो मनुष्य भौतिक एवं अभौतिक विषयों पर विश्वास करता है, किन्तु कर्मा एवं पुनर्जन्म को पूर्णतः नकारता है, ऐसा मनुष्य अपूर्ण नास्तिक होता है।

नास्तिक और अपूर्ण नास्तिक दोनों मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान की भक्ति नहीं करते हैं। नास्तिक और अपूर्ण नास्तिक दोनों मनुष्य अपने कर्म को भक्ति मानते हैं। जो नास्तिक अथवा अपूर्ण नास्तिक केवल अपने कर्म पर ध्यानकेंद्रित करते हुए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करता है, ऐसे नास्तिक अथवा अपूर्ण नास्तिक को अवश्य मोक्ष की प्राप्ति होती है। नास्तिक अथवा अपूर्ण नास्तिक द्वारा सतभक्ति, रजभक्ति, तमभक्ति आदि किसी भी प्रकार की भक्ति नहीं होने के कारण नास्तिक अथवा अपूर्ण नास्तिक को सतभक्ति द्वारा प्राप्त होने वाले पुण्य एवं परमपुण्य की प्राप्ति नहीं होती है, नास्तिक अथवा अपूर्ण नास्तिक को रजभक्ति एवं तमभक्ति द्वारा प्राप्त होने वाले पाप एवं घोरपाप की प्राप्ति नहीं होती है।

एक नास्तिक मनुष्य अपने उचित कर्म द्वारा मोक्ष एवं परमेश्वर को प्राप्त कर सकता है, किन्तु एक अज्ञानी आस्तिक मनुष्य कभी भी मोक्ष एवं परमेश्वर को प्राप्त नहीं कर सकता है। आस्तिक एवं नास्तिक दोनों मनुष्य को परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को स्वीकारने अथवा नकारने से पूर्व स्वयं के अस्तित्व एवं स्वभाव को जानना, समझना अति आवश्यक होता है। आस्तिक एवं नास्तिक दोनों मनुष्य सनातन धर्मज्ञान द्वारा स्वयं के अस्तित्व और परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को समझ सकते हैं। पृथ्वीलोक पर धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करना प्रत्येक मनुष्य के जीवन का प्रमुख उद्देश्य होता है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए मनुष्य परमेश्वर, ईश्वर, भगवान के अस्तित्व को स्वीकारे अथवा नकारे इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मनुष्य को परमेश्वर, ईश्वर, भगवान की भक्ति करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। आस्तिक एवं नास्तिक जो मनुष्य सनातन धर्म के अनुकूल कर्म करते हुए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करता है, ऐसे मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

१०. काम

मनुष्य के शरीर की अन्न, वस्त्र, निवास, इलाज और यौन आदि पांच जरूरतें होती हैं। मनुष्य की इन्हीं पांच शारीरिक जरूरत की इच्छा को कामना कहते हैं। मनुष्य की अन्न, वस्त्र, निवास, और इलाज आदि ४ जरूरतें प्रकृति द्वारा पूरी की जाती है, किन्तु यौन जरूरत मनुष्य को अन्य मनुष्य द्वारा पूरी करनी होती है। मनुष्य की इसी यौन जरूरत को पूरा करने की इच्छा रखना, काम कहते हैं। अर्थात् यौन इच्छा को काम कहते हैं।

मनुष्य को मोक्ष प्राप्ति के लिए धर्म, अर्थ के साथ काम की पूर्ति करना अनिवार्य होता है। काम की पूर्ति होने पर मनुष्य अपनी मन की अंतिम अर्धनारद अवस्था प्राप्त करता है। मनुष्य को अर्धनारद अवस्था प्राप्त होने पर मनुष्य के मन को पूर्णतः प्राप्त होती है। मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए अपने मन का पर्याय विस्तार एवं पूर्णतः प्राप्त करना अनिवार्य होता है। काम की पूर्ति होने से मनुष्य के मन को पूर्णतः प्राप्त होती है।

मनुष्य को पर्याप्त रतिक्षण एवं कामतृप्ति की अनुभूति होने पर काम की पूर्ति होती है। मनुष्य को रतिक्षण एवं कामतृप्ति की अनुभूति पाने के लिए कामभोग करना अनिवार्य होता है। काम को भोगने की क्रिया को कामभोग कहते हैं। जब मनुष्य अपना अस्तित्व भुलाकर प्रेम एवं समर्पण भाव से उचित यौनसाथी के साथ कामभोग करता है, तब मनुष्य को रतिक्षण एवं कामतृप्ति की अनुभूति प्राप्त होती है।

मनुष्य को किसी भी अन्य मनुष्य के साथ कामभोग नहीं करना होता है। मनुष्य की कुल ८ प्रजातियां होती है, मनुष्य को केवल अपने अनुकूल मनुष्य प्रजाति के साथ ही कामभोग करना होता है। १ पूर्णपुरुष, २ पूर्णस्त्री, ३ समलैंगिक कर्मी पुरुष, ४ समलैंगिक कर्मी स्त्री, ५ समलैंगिक भोगी पुरुष, ६ समलैंगिक भोगी स्त्री, ७ किन्नर, ८ हिजड़ा आदि मनुष्य की ८ प्रजातियां होती है।

एक पूर्णपुरुष को केवल स्त्री के प्रति यौन आकर्षण रहता है। एक पूर्णस्त्री को केवल पुरुष के प्रति यौन आकर्षण रहता है। एक समलैंगिक भोगी पुरुष को केवल पुरुष एवं किन्नर के प्रति यौन आकर्षक रहता है। एक समलैंगिक भोगी स्त्री को केवल स्त्री के प्रति यौन आकर्षक रहता है। एक समलैंगिक कर्मी पुरुष को स्त्री, पुरुष, किन्नर, हिजड़ा आदि सभी के प्रति यौन आकर्षक रहता है। एक समलैंगिक

कर्मी स्त्री को पुरुष, स्त्री, किन्नर के प्रति यौन आकर्षक रहता है। एक किन्नर को पुरुष, स्त्री, किन्नर के प्रति यौन आकर्षक रहता है। एक हिजड़ा को केवल पुरुष के प्रति यौन आकर्षक रहता है।

एक पूर्णपुरुष केवल पूर्णस्त्री और समलैंगिक कर्मी स्त्री आदि २ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकता है। एक पूर्णस्त्री केवल पूर्णपुरुष और समलैंगिक कर्मी पुरुष आदि २ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकती हैं। एक समलैंगिक भोगी पुरुष केवल समलैंगिक कर्मी पुरुष और किन्नर आदि २ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकता है। एक समलैंगिक भोगी स्त्री केवल एक समलैंगिक कर्मी स्त्री के साथ कामभोग कर सकती है।

एक समलैंगिक कर्मी पुरुष केवल पूर्णस्त्री, समलैंगिक कर्मी स्त्री, समलैंगिक भोगी पुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, किन्नर, हिजड़ा आदि ६ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकता है। एक समलैंगिक कर्मी स्त्री केवल पूर्णपुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, समलैंगिक भोगी स्त्री, किन्नर आदि ४ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकती है। एक किन्नर केवल समलैंगिक भोगी पुरुष, समलैंगिक कर्मी पुरुष, समलैंगिक कर्मी स्त्री, किन्नर आदि ४ प्रजाति के साथ कामभोग कर सकता है। एक हिजड़ा केवल एक समलैंगिक कर्मी पुरुष के साथ कामभोग कर सकता है।

मनुष्य को अयोग्य मनुष्य प्रजाति के साथ कामभोग नहीं करना है। मनुष्य को किसी भी पशुप्राणी के साथ कामभोग नहीं करना है। मनुष्य को अपने जीवनसाथी के अलावा अन्य किसी पारिवारिक सदस्य के साथ कामभोग नहीं करना है। मनुष्य को रोगी मनुष्य के कामभोग नहीं करना है। मनुष्य को इच्छा विरुद्ध जबर्दस्ती कामभोग नहीं करना है। मनुष्य को स्वयं को शारिरिक पीड़ा देने अथवा अन्य मनुष्य को शारिरिक पीड़ा देने के लिए स्वपिडन-परपीडन कामभोग नहीं करना है।

मनुष्य की आँख, नाक, जीभ, कान, त्वचा आदि ५ ज्ञानेन्द्रियों से कामवासना प्रभावित होती है। कामभोग करने की निरंतर इच्छा को कामवासना कहते हैं। प्रत्येक मनुष्य के कोई १-२ विभिन्न ज्ञानेन्द्रियाँ कामवासना को अधिक प्रभावित करती हैं, परिणामस्वरूप प्रत्येक मनुष्य की कामवासना भिन्न होती है। कामवासना मनुष्य से विभिन्न प्रकार के कामक्रीड़ा करवाती है।

प्रेमक्रीड़ा, कामक्रीड़ा, मैथुनक्रीड़ा, रतिक्रीड़ा, गांठपूजा आदि ५ प्रकार की योग्य कामक्रीड़ा होती है। जड़पूजा, स्वपिडन-परपीडन आदि २ प्रकार की अयोग्य कामक्रीड़ा होती हैं। मनुष्य को प्रेमक्रीड़ा, कामक्रीड़ा, मैथुनक्रीड़ा, रतिक्रीड़ा, गांठपूजा आदि सभी ५ प्रकार की कामक्रीड़ा अवश्य करनी होती

है। मनुष्य को जड़पुजा, स्वपिडन-परपीडन आदि २ प्रकार की अयोग्य कामक्रीड़ा बिल्कुल भी नहीं करनी होती है।

दो मनुष्य के मन मिलाप की क्रीड़ाओं को प्रेमक्रीड़ा कहते हैं। जब दो मनुष्य एक दूसरे के मन को अपने मन में आत्मसात करने के लिए विभिन्न क्रीड़ाएं करते हैं, उसे प्रेमक्रीड़ा कहते हैं। दो मनुष्य के तन मिलाप की क्रीड़ाओं को कामक्रीड़ा कहते हैं। जब दो मनुष्य एक दूसरे के तन को अपने तन में आत्मसात करने के लिए विभिन्न क्रीड़ाएं करते हैं, उसे कामक्रीड़ा कहते हैं।

दो मनुष्य के यौनांग मिलाप की क्रीड़ाओं को मैथुनक्रीड़ा कहते हैं। जब दो मनुष्य एक दूसरे के यौनांग को अपने यौनांग में आत्मसात करने के लिए विभिन्न क्रीड़ाएं करते हैं, उसे मैथुनक्रीड़ा कहते हैं। मैथुनक्रीड़ा से वीर्यपात एवं रतिक्षण प्राप्त होने के बाद की जाने वाली कामक्रीड़ा को रतिक्रीड़ा कहते हैं। मनुष्य का अपने यौनसाथी के रूप, स्पर्श, गंध, स्वाद, वाणी एवं भाव के प्रति पूर्णतः समर्पित होने की क्रियाओं को गाँठपूजा कहते हैं।

केवल कामक्रीड़ा अथवा मैथुनक्रीड़ा करने से मनुष्य को रतिक्षण की अनुभूति हो सकती है, किन्तु कामतृप्ति की अनुभूति नहीं हो पाती है। मनुष्य को कामभोग से कामतृप्ति की अनुभूति के लिए प्रेमक्रीड़ा, कामक्रीड़ा, मैथुनक्रीड़ा, रतिक्रीड़ा, गाँठपूजा आदि सभी प्रकार की यौनक्रीड़ाएं करना आवश्यक होता है। मनुष्य को कामतृप्ति की अनुभूति होने के बाद मनुष्य की कामवासना नियंत्रित हो जाती है, और मनुष्य अपनी अंतिम अर्धनारद अवस्था प्राप्त करता है।

मनुष्य की शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद आदि ८ अवस्थाएं होती हैं। मनुष्य को धर्म एवं अर्थ की पूर्ति करते समय अपने मन की शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव आदि ७ अवस्थाएं प्राप्त होती हैं, किन्तु अर्धनारद अवस्था केवल काम की पूर्ति होने के पश्चात ही प्राप्त होती है। मनुष्य के मन को पूर्णतः प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अपने मन की सभी ८ अवस्थाएं प्राप्त करना अनिवार्य होता है, इसलिए मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए काम की पूर्ति करना अनिवार्य होता है।

११. जन्म-मृत्यु

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने पृथ्वीलोक पर समय, स्थान, ऊर्जा आदि ३ आयामों से मनुष्य की उत्पत्ति की है। समय से मनुष्य को जीवनकाल प्राप्त होता है। स्थान से मनुष्य को शरीर प्राप्त होता है। ऊर्जा से मनुष्य को पिंडऊर्जा प्राप्त होती है। स्थान, प्रकृति, पदार्थ एक आयाम के ३ भिन्न स्वरूप हैं। मनुष्य का शरीर प्रकृति के आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि आदि ५ तत्वों से निर्मित हुआ है। मनुष्य की पिंडऊर्जा ईश्वर दुर्गा के आत्मा, मन, प्राण आदि ३ तत्वों से निर्मित हुई है।

मनुष्य एक ऊर्जा है। मनुष्य का शरीर एक जीवित पदार्थ है। मनुष्य का जन्म-मृत्यु नहीं होता है, केवल शरीर का जन्म-मृत्यु होता है। मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा, पिंडऊर्जा, परमऊर्जा आदि ३ भिन्न अवस्था में परिवर्तित होता रहता है। मनुष्य को सूक्ष्मऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए कुछ विशेष कर्म करने होते हैं। मनुष्य को कर्म करने के लिए जीवित शरीर की आवश्यकता होती है।

मनुष्य को पृथ्वीलोक पर शरीर प्राप्त होने से पूर्व मनुष्य बैकुण्ठधाम की एक सूक्ष्मऊर्जा होता है। मनुष्य को पृथ्वीलोक पर शरीर प्राप्त होने पर मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा से पिंडऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य को अपने शरीर द्वारा कर्म करते हुए स्वयं को पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होना होता है। मैं नारायण परमेश्वर मनुष्य को सूक्ष्मऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए ईश्वर ब्रह्म द्वारा शरीर एवं ईश्वर दुर्गा द्वारा जीवन प्रदान करता हूँ।

मनुष्य के शरीर के भीतर आत्मा, मन, प्राण आदि ३ भिन्न पिंडऊर्जा एकत्रित होकर कार्य करती हैं। आत्मा मुख्यतः मनुष्य के अंतर-बाह्य कर्म का हिसाब रखती है। मन मनुष्य स्वयं होता है। प्राण मनुष्य को कर्म करने की शक्ति एवं प्रेरणा देता है। जब मनुष्य बैकुण्ठधाम की सूक्ष्मऊर्जा से पिंडऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए पृथ्वीलोक पर अवतरित होता है, उसे अवतार कहते हैं। मनुष्य अवतार को नारद कहते हैं। पृथ्वीलोक पर जीवित प्रत्येक मनुष्य नारद अवतार है।

ईश्वर दुर्गा प्रत्येक धर्मवर्ष के चैत्र महीने के पहले दिन से अगले ४० दिन तक 'नारद अवतार' अर्थात् मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित करती है। ईश्वर दुर्गा प्रति दिन १००० 'नारद अवतार' अर्थात् मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित करती है। एक धर्मवर्ष में ४०००० मनुष्य बैकुण्ठ से पृथ्वीलोक पर

अवतरित होते हैं। प्रत्येक जीव, मनुष्य एवं भगवान केवल धर्मवर्ष में पृथ्वीलोक पर अवतरित होते हैं।

एक पर्व में उदय, प्राचीन, मध्य, आधुनिक आदि ४ काल होते हैं। प्रत्येक काल में ६ चतुर्युग होते हैं। सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग आदि ४ युगों का एक चतुर्युग होता है। प्रत्येक युग १२००० वर्ष का होता है। प्रत्येक १२ वर्ष के बाद एक धर्मवर्ष होता है। ईश्वर दुर्गा प्रत्येक पर्व के प्राचीन, मध्य, आधुनिक आदि ३ काल के प्रत्येक धर्मवर्ष में मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित करती रहती है। ईश्वर दुर्गा प्रत्येक पर्व के उदयकाल और अंतिम कलियुग के प्रलयकाल में मनुष्य को पृथ्वीलोक पर अवतरित नहीं करती हैं।

जन्म : जब पिंडऊर्जा और जीवित पदार्थ एकरूप हो जाते हैं, तब जीव शरीर की उत्पत्ति होती है। जब जीव शरीर अपनी माँ की गर्भ से बाहर निकलकर अपना स्वतंत्र जीवन प्राप्त करता है, तब उस जीव शरीर का जन्म होता है। मनुष्य एक ऊर्जा है, मनुष्य का शरीर जीव पदार्थ है। मनुष्य का जन्म नहीं होता है, मनुष्य के शरीर का जन्म होता है। मनुष्य के शरीर के पिंडजन्म एवं पुनर्जन्म आदि २ प्रकार के जन्म होते हैं।

जब मनुष्य बैकुण्ठधाम की सूक्ष्मऊर्जा से पिंडऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए पृथ्वीलोक पर पहली बार अवतरित होता है, तब मनुष्य का पिंडजन्म होता है। जब मनुष्य के पिंडऊर्जा को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है, और मोक्ष प्राप्ति के लिए मनुष्य की पिंडऊर्जा एक शरीर को त्यागकर दूसरा शरीर धारण करती है, तब मनुष्य का पुनर्जन्म होता है।

मनुष्य का पिंडजन्म एक निश्चित समय केवल धर्मवर्ष में होता है। मनुष्य का पुनर्जन्म एक निश्चित समय किन्तु किसी भी वर्ष में होता है। धर्मवर्ष के चैत्र एवं वैशाख महीने में केवल ४०००० मनुष्य का पिंडजन्म होता है, अन्य सभी मनुष्य का पुनर्जन्म होता है। पृथ्वीलोक पर मनुष्य का केवल एक बार पिंडजन्म होता है। पृथ्वीलोक पर मनुष्य का अनेकों बार पुनर्जन्म होता है।

पुरुष, स्त्री, समलैंगिक कर्मी पुरुष, समलैंगिक कर्मी स्त्री, समलैंगिक भोगी पुरुष, समलैंगिक भोगी स्त्री, किन्नर, हिजड़ा आदि मनुष्य की ८ प्रजातियां होती हैं। पिछले जन्म में मनुष्य जिस प्रजाति का होता है, उसका पुनर्जन्म उसी प्रजाति में होता है। प्रत्येक जन्म में मनुष्य की प्रजाति एक समान रहती है। मनुष्य को स्वयं की प्रजाति को स्वीकार करते हुए स्वयं की प्रजाति के अनुकूल व्यवहार करना होता है।

एक पुरुष का पुनर्जन्म एक पुरुष प्रजाति में होता है। एक स्त्री का पुनर्जन्म एक स्त्री प्रजाति में होता है। एक समलैंगिक पुरुष का पुनर्जन्म एक समलैंगिक पुरुष प्रजाति में होता है। एक समलैंगिक स्त्री का पुनर्जन्म एक समलैंगिक स्त्री प्रजाति में होता है। एक किन्नर का पुनर्जन्म एक किन्नर प्रजाति में होता है। एक हिजड़ा का पुनर्जन्म एक हिजड़ा प्रजाति में होता है।

मनुष्य की मृत्यु से पूर्व मनुष्य का पुनर्जन्म निश्चित होता है। मनुष्य की मृत्यु से ३ महीने पूर्व मनुष्य के नवीन शरीर के निर्माण की शुरुआत हो चुकी होती है। जब मनुष्य के शरीर की मृत्यु हो जाती है, तब ३ गण इतनी अवधि में मनुष्य की पिंडऊर्जा नवीन शरीर को धारण करते हुए पुनर्जन्म लेती है। एक गर्भवती स्त्री के गर्भ में पनप रहे शिशु के भीतर ३ महीने तक अपनी माँ की पिंडऊर्जा होती है, ३ महीने बाद शिशु को अपनी स्वतंत्र पिंडऊर्जा प्राप्त होती है।

जब मनुष्य का १०८ बार पुनर्जन्म होने के बाद भी मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है, तब मनुष्य की पिंडऊर्जा के भीतर मौजूद आत्मा ईश्वर सरस्वती में विलीन होती है, प्राण ईश्वर काली में विलीन होता है, और मन अर्थात् मनुष्य स्वयं पृथ्वीलोक के भूमध्य पाताललोक में विलीन होता है।

मनुष्य एक बार पाताललोक में विलीन हो जाता है, तब मनुष्य को उस युग में दोबारा पुनर्जन्म प्राप्त नहीं होता है। ऐसे मनुष्य को अगले युग में मनुष्य शरीर एवं पुनर्जन्म प्राप्त होता है, तबतक उस मनुष्य को पाताललोक में अगले युग का इंतजार करना पड़ता है।

पृथ्वीलोक पर एक मनुष्य को कुल १२ हजार बार पुनर्जन्म प्राप्त हो सकता है। जब मनुष्य १२ हजार बार पुनर्जन्म लेने के बाद भी मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर पाता है, तब मनुष्य की पिंडऊर्जा का सुक्ष्मऊर्जा में परिवर्तन हो जाता है, और मनुष्य सदैव के लिए अपना मानवीय अस्तित्व खो देता है।

मृत्यु : जब जीव शरीर के भीतर से पिंडऊर्जा बाहर निकलती है, जिससे जीव शरीर एवं पिंडऊर्जा अलग हो जाते हैं, तब उस जीव शरीर की मृत्यु हो जाती है। मनुष्य एक ऊर्जा है, मनुष्य का शरीर एक जीव पदार्थ है। मनुष्य की मृत्यु नहीं होती है, मनुष्य के शरीर की मृत्यु हो जाती है। मनुष्य के शरीर की प्राकृतिक एवं अकाल आदि २ प्रकार की मृत्यु हो जाती है।

जब मनुष्य के शरीर की उचित जीवनकाल पूर्ण होने पर मृत्यु हो जाती है, उसे प्राकृतिक मृत्यु कहते हैं। जब मनुष्य के शरीर की उचित जीवनकाल पूर्ण होने से पूर्व मृत्यु हो जाती है, उसे अकाल मृत्यु कहते हैं। मनुष्य की प्राकृतिक मृत्यु ईश्वर शिव के नियंत्रण में होती है। मनुष्य की अकाल मृत्यु स्वयं

मनुष्य की गलतियों के कारण होती है। जब मनुष्य अपने शरीर का खयाल नहीं रखता है, अत्यधिक अधर्म एवं असुरक्षित हिंसा करता है, तब मनुष्य के शरीर की अकाल मृत्यु हो जाती है।

ईश्वर ब्रह्म को पृथ्वीलोक पर मौजूद प्रत्येक मनुष्य की प्राकृतिक अथवा अकाल मृत्यु होने की जानकारी ईश्वर शिव द्वारा ३ महीने पूर्व प्राप्त होती है। ईश्वर ब्रह्म पुनर्जन्म प्राप्त करने वाले मनुष्य के शरीर के मृत्यु से ३ महीने पूर्व ही उस मनुष्य के लिए नवीन शरीर के निर्माण की शुरुआत करते हैं। मनुष्य की अकाल मृत्यु के लिए मनुष्य के स्वयं के पिछले जन्म के कर्म एवं वर्तमान जन्म के कर्म जिम्मेदार होते हैं।

मनुष्य की स्मृति एवं ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क में संग्रहित होती है। मनुष्य की कला मनुष्य के मन में संग्रहित होती है। मनुष्य के शरीर की मृत्यु के साथ मनुष्य अपनी स्मृति एवं ज्ञान सदैव के लिए खो देता है। मनुष्य के शरीर की मृत्यु के साथ मनुष्य की स्मृति एवं ज्ञान सदैव के लिए नष्ट होने के कारण मनुष्य अपने पिछले जन्म के बारे में कुछ भी स्मृति एवं ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता है। किन्तु मनुष्य की कला मनुष्य के मन में संग्रहित होने के कारण मृत्यु के बाद मनुष्य अपनी पिछले जन्म की कलाओं के साथ पुनर्जन्म प्राप्त करता है। मनुष्य की विभिन्न कलाएँ मनुष्य के मृत्यु के बाद भी सदैव मनुष्य के साथ रहती हैं।

मनुष्य को कर्म करने के लिए एक नश्वर शरीर प्राप्त हुआ है। एक समय के बाद नश्वर शरीर की मृत्यु होना निश्चित है। जबतक मनुष्य अपने कर्म द्वारा मोक्ष की प्राप्ति नहीं करता है, तबतक मनुष्य को मृत्यु के बाद तुरंत दूसरा शरीर प्राप्त होता रहता है। जो मनुष्य अपने वर्तमान जीवन के प्रति अत्यधिक आसक्ति रखता है, ऐसा मनुष्य सदैव मृत्यु से भयभीत रहता है। मनुष्य को मृत्यु से भयभीत नहीं होना है, बल्कि मृत्यु का स्वीकार करते हुए स्वर्गलोक पर अवतरित होने की इच्छा रखनी है। मनुष्य को बिना मृत्यु स्वर्गलोक की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

एक मनुष्य के कर्म दूसरे मनुष्य को पुनर्जन्म, पाताललोक, अथवा स्वर्गलोक की प्राप्ति नहीं करा सकते हैं। मनुष्य को मृत्यु के बाद पुनर्जन्म, पाताललोक, स्वर्गलोक आदि प्राप्त होना मनुष्य के स्वयं के कर्म पर निर्भर करता है। जो मनुष्य धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति नहीं करने के कारण मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर पाता है, ऐसे मनुष्य को मृत्यु के बाद पुनर्जन्म प्राप्त होता है। जो मनुष्य निरंतर १०८ बार पुनर्जन्म लेने के बाद भी मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर पाता है, ऐसे मनुष्य को मृत्यु के बाद पाताललोक प्राप्त होता है। जो मनुष्य धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करता है, ऐसे मनुष्य को मृत्यु के बाद स्वर्गलोक प्राप्त होता है।

जब मनुष्य के शरीर से पिंडऊर्जा बाहर निकलती है, उसी क्षण मनुष्य के शरीर की मृत्यु हो जाती है। एक बार मनुष्य के शरीर की मृत्यु हो जाती है, तब उस शरीर में पिंडऊर्जा दोबारा प्रवेश नहीं कर सकती है। इसलिए एक बार मनुष्य के शरीर की मृत्यु हो जाने के बाद वो शरीर दोबारा जीवित नहीं हो सकता है। मनुष्य के शरीर की मृत्यु होने पर मृत शरीर को जलाकर नष्ट करना मनुष्य का धर्म होता है। मनुष्य के मृत शरीर का असुरक्षित संचयन करना अथवा मृत शरीर को जमीन में दफन करना अधर्म होता है।

जीवन : मनुष्य के शरीर के जन्म से मृत्यु की कालावधि को जीवन कहते हैं। मनुष्य के शिशु, बाल, किशोर, आदि ३ प्रकार के अल्पकालिक जीवन होते हैं और प्रौढ़, वृद्ध आदि २ प्रकार के पूर्ण जीवन होते हैं। पिंडजन्म लेने वाला प्रत्येक मनुष्य केवल प्रौढ़, वृद्ध आदि पूर्ण जीवन प्राप्त करता है। पुनर्जन्म लेने वाला प्रत्येक मनुष्य अपने पूर्वजन्म एवं वर्तमान जन्म के कर्मों के अनुसार शिशु, बाल, किशोर, प्रौढ़, वृद्ध आदि सभी प्रकार के जीवन प्राप्त करता है।

जब किसी मनुष्य के शरीर की मृत्यु (०-६ महीने) शिशु अवस्था में होती है, उस मनुष्य के जीवनकाल को शिशु जीवन कहते हैं। जब किसी मनुष्य के शरीर की मृत्यु (६ महीने – ९ वर्ष) बाल अवस्था में होती है, उस मनुष्य के जीवनकाल को बाल जीवन कहते हैं। जब किसी मनुष्य के शरीर की मृत्यु (९ वर्ष – १८ वर्ष) किशोर अवस्था में होती है, उस मनुष्य के जीवनकाल को किशोर जीवन कहते हैं। जब किसी मनुष्य के शरीर की मृत्यु (१८ वर्ष – ४८ वर्ष) प्रौढ़ अवस्था में होती है, उस मनुष्य के जीवनकाल को प्रौढ़ जीवन कहते हैं। जब किसी मनुष्य के शरीर की मृत्यु (४८ वर्ष के बाद) वृद्ध अवस्था में होती है, उस मनुष्य के जीवनकाल को वृद्ध जीवन कहते हैं।

शिशु, बाल, किशोर, प्रौढ़ एवं वृद्ध आदि सभी प्रकार के जीवन प्राप्त करने वाले मनुष्य को प्राकृतिक मृत्यु एवं अकाल मृत्यु आदि दोनों प्रकार की मृत्यु प्राप्त हो सकती है। शिशु, बाल, किशोर, आदि ३ प्रकार के अल्पकालिक जीवन प्राप्त करने वाले मनुष्य को मृत्यु के बाद पुनर्जन्म अथवा स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है। प्रौढ़ एवं वृद्ध आदि २ प्रकार के पूर्ण जीवन प्राप्त करने वाले मनुष्य को मृत्यु के बाद पुनर्जन्म, पाताललोक, अथवा स्वर्गलोक की प्राप्ति हो सकती है।

जिस मनुष्य की अकाल मृत्यु होती है, ऐसे मनुष्य को अपना मूल पुनर्जन्म पाने में कुछ जीवनकाल शेष रह जाता है। ऐसे मनुष्य के शेष बचे जीवनकाल की पूर्ति के लिए उस मनुष्य को शिशु, बाल,

एवं किशोर आदि अल्पकालिक जीवन प्राप्त होता है। जब मनुष्य शिशु, बाल, एवं किशोर आदि अल्पकालिक जीवनकाल की पूर्ति करते हुए मृत्यु को प्राप्त होता है, तब उस मनुष्य को अपना मूल पुनर्जन्म प्राप्त होता है।

जबतक मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है, तबतक मनुष्य को नवीन जीवन प्राप्त होता रहता है। मनुष्य को एक युग में केवल १०८ बार जीवन की प्राप्ति हो सकती है। मनुष्य एक युग में शिशु, बाल, किशोर, प्रौढ़, वृद्ध आदि विभिन्न प्रकार के जीवन प्राप्त करता है। जो मनुष्य एक युग का १०८ वा जीवन जी रहा होता है, उस मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करना अनिवार्य होता है, अन्यथा उस मनुष्य को पाताललोक की प्राप्ति होती है, और उस मनुष्य को पुनर्जन्म पाने के लिए अगले युग के आने का इंतजार करना पड़ता है।

जो मनुष्य पृथ्वीलोक पर एक युग का १०८ वा जीवन जी रहा होता है, अथवा अपना अंतिम १२००० वा जीवन जी रहा होता है, उस मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति करने के लिए पर्याप्त जीवनकाल प्राप्त हो सके, इसलिए ईश्वर शिव स्वयं उस मनुष्य के प्राण की रक्षा करते हैं, और उस मनुष्य की अकाल मृत्यु को पुर्णतः रोखते हैं। उस मनुष्य की किसी भी स्थिति, परिस्थिति में अकाल मृत्यु नहीं होती है, और वो मनुष्य अपना पूरा जीवनकाल प्राप्त करता है।

मोक्षकाल : धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करने वाले मनुष्य को मृत्यु से पूर्व मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्ष की प्राप्ति से स्वर्गलोक की प्राप्ति के बीच के जीवनकाल को मोक्षकाल कहते हैं। जिस प्रकार बैकुण्ठधाम से मनुष्य केवल धर्मवर्ष के चैत्र एवं वैशाख महीने में पृथ्वीलोक पर अवतरित होते हैं, उसी प्रकार पृथ्वीलोक पर मोक्ष की प्राप्ति करने वाले मनुष्य केवल स्वर्गलोक के धर्मवर्ष पर स्वर्गलोक पर अवतरित होते हैं।

जबतक स्वर्गलोक के धर्मवर्ष का उचित समय नहीं आता है, तबतक एक मोक्ष की प्राप्ति कर चुके मनुष्य को पृथ्वीलोक पर एक विशेष जीवनकाल पूर्ण करना होता है, जिसे मोक्षकाल कहते हैं। मोक्षकाल की पूर्ति करने के लिए कुछ मनुष्य को अकाल मृत्यु के कारण पुनर्जन्म लेना पड़ता है। मोक्षकाल की अवधि में पुनर्जन्म लेने वाले मनुष्य के कर्मों का धर्म, अधर्म, अर्थ, काम, पाप, पुण्य आदि किसी भी विषयों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। एक बार मोक्ष की प्राप्ति करने वाला मनुष्य अपने पुनर्जन्म में बिना कर्म किए मृत्यु के बाद स्वर्गलोक की प्राप्ति करता है।

१२. अजर-अमर

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मैंने परमशांति, समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ९ आयामों से स्वयं का निर्माण किया है। मेरे सभी ९ आयाम अमर है, किन्तु मेरा एकमात्र परमशांति शून्य आयाम अजर-अमर है। जिस आयाम के अस्तित्व में कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा नहीं आता है, जिस आयाम का अस्तित्व सनातन रहता है, उस आयाम को अजर-अमर कहते हैं। जिस आयाम के अस्तित्व में कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा आता है, किन्तु उस आयाम का अस्तित्व पूर्णतः नष्ट नहीं होता है, उस आयाम को अमर कहते हैं।

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मेरा शून्य आयाम परमशांति अजर-अमर है। आयाम परमशांति के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, आयाम परमशांति का अस्तित्व सनातन रहता है। आयाम परमशांति का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है। मेरे समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ८ आयामों के अस्तित्व में निरंतर कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा आता रहता है, किन्तु मेरे सभी आयामों का अस्तित्व कभी पूर्णतः नष्ट नहीं होता है। इसलिए मेरे समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ८ आयाम अमर है, किन्तु अजर नहीं हैं।

समस्त आयाम, ब्रह्मांड, बैकुंठ, ईश्वर, भगवान को अपने भीतर बैकुंठगर्भ में उत्पन्न करने वाला मैं एकमात्र परमेश्वर नारायण मूलस्वरूप परमशांति अवस्था में हूँ। समस्त आयाम, ब्रह्मांड, बैकुंठ का उत्पादन, संचालन, विघटन करने वाले ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि सभी ७ निराकार ईश्वर मूलस्वरूप परमशांति अवस्था में हैं। पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर मौजूद समस्त मनुष्यों को सनातन धर्मज्ञान देने के लिए बैकुंठ से सभी ७ ग्रहलोक पर अवतरित होने वाले शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ भगवान मूलस्वरूप परमशांति अवस्था में हैं।

परमेश्वर नारायण के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, परमेश्वर का अस्तित्व सनातन रहता है, परमेश्वर का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है, इसलिए परमेश्वर नारायण अजर-अमर हैं। ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि ७ निराकार ईश्वर के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, ईश्वर का अस्तित्व सनातन रहता है, ईश्वर का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है, इसलिए ब्रह्म, विष्णु, शिव, दुर्गा, काली, लक्ष्मी, सरस्वती आदि सभी ७ निराकार ईश्वर अजर-अमर हैं।

शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि ७ भगवान के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, भगवान का अस्तित्व सनातन रहता है, भगवान का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है, इसलिए शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ भगवान अजर-अमर हैं। पृथ्वीलोक पर अवतरित होने वाले शंकर, दत्तात्रेय, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि आदि सभी ७ भगवान का मन शून्य आयाम परमशांति तत्व से निर्मित हुआ है, इसलिए सभी भगवान अजर-अमर हैं।

पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि सभी ७ ग्रहलोक और बैकुंठ में मौजूद प्रत्येक मनुष्य का मन का निर्माण ऊर्जा आयाम से हुआ है। मनुष्य के शरीर में मौजूद मन मनुष्य स्वयं होता है। ऊर्जा आयाम से निर्मित मन के स्वरूप में कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा आता रहता है। मन के अस्तित्व में बदलाव होता रहता है, मन का अस्तित्व सनातन नहीं रहता है, १२००० बार जन्म लेने के बावजूद मन को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होने पर मन का अस्तित्व पूर्णतः नष्ट होकर सूक्ष्मऊर्जा में परिवर्तित होता है, इसकारण मनुष्य एवं मनुष्य का मन अजर नहीं होता है, और अमर भी नहीं होता है।

मनुष्य के शरीर में मौजूद आत्मा ईश्वर सरस्वती का अंश है। मनुष्य की आत्मा शून्य आयाम परमशांति से निर्मित हुई है। आत्मा के स्वरूप में कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा नहीं आता है। आत्मा के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, आत्मा का अस्तित्व सनातन रहता है, आत्मा का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है, इसलिए आत्मा अजर-अमर होती है।

मनुष्य को पृथ्वीलोक पर मोक्ष प्राप्त करने के लिए १२००० बार पुनर्जन्म प्राप्त हो सकता है। जब कोई मनुष्य १२००० बार पुनर्जन्म प्राप्त करने के बावजूद मोक्ष की प्राप्ति नहीं कर पाता है, उस मनुष्य की पिंडऊर्जा का सूक्ष्मऊर्जा में परिवर्तन हो जाता है। मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा में परिवर्तित हो जाने पर मनुष्य सदैव के लिए मनुष्य अस्तित्व खो देता है, और एक अमर सूक्ष्मऊर्जा का स्वरूप प्राप्त करता है। सूक्ष्मऊर्जा में निरंतर कमजोरी, दुखापद, बदलाव, बुढ़ापा आता रहता है, किन्तु सूक्ष्मऊर्जा का अस्तित्व कभी पूर्णतः नष्ट नहीं होता है, इसकारण मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा स्वरूप प्राप्त करने पर एक अमर ऊर्जा हो जाता है, किन्तु अपना मनुष्य अस्तित्व सदैव के लिए खो देता है। मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा स्वरूप प्राप्त करने पर कभी भी परमेश्वर नारायण का अविभाज्य अंश नहीं बन सकता है।

जब मनुष्य पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि सभी ७ ग्रहलोक पर मोक्ष प्राप्त करके बैकुंठ में जीवन प्राप्त करता है, और बैकुंठ में परममोक्ष एवं परममुक्ति प्राप्त करके परमऊर्जा अवस्था

से परमशांति आयाम अवस्था में परिवर्तित हो जाता है, तब मनुष्य का मन ऊर्जा आयाम से परमशांति आयाम में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य का मन परमशांति आयाम में परिवर्तित हो जाने से मनुष्य के अस्तित्व में कोई बदलाव नहीं होता है, मनुष्य सनातन रहता है, मनुष्य का अस्तित्व कभी नष्ट नहीं होता है, मनुष्य परमेश्वर का अविभाज्य अंश हो जाता है, और मनुष्य सदैव के लिए अजर-अमर हो जाता है।

१३. मोक्ष

पृथ्वीलोक पर जीवित प्रत्येक मनुष्य एक स्वतंत्र पिंडऊर्जा है। मनुष्य की पिंडऊर्जा में आत्मा, मन, प्राण आदि ३ तत्व का समावेश होता है। पिंडऊर्जा में मौजूद मन मनुष्य स्वयं होता है। पृथ्वीलोक पर मनुष्य का पहला पिंडजन्म होता है। स्वर्गलोक पर मनुष्य का दूसरा पिंडजन्म होता है। स्वर्गलोक पर अपना दूसरा पिंडजन्म प्राप्त करने के लिए मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करते हुए अपने मन का पर्याय विस्तार एवं मन की पूर्णता प्राप्त करनी होती है।

जब मनुष्य अपने मन का पर्याय विस्तार करते हुए मन की पूर्णता प्राप्त करता है, तब मनुष्य स्वर्गलोक पर अपना दूसरा पिंडजन्म प्राप्त करने की पात्रता हासिल करता है, मनुष्य की इसी उपलब्धि को मोक्ष की प्राप्ति कहते हैं। मनुष्य का अपने मन का पर्याय विस्तार करते हुए मन की पूर्णता प्राप्त करना, इस अवस्था को मोक्ष कहते हैं।

मनुष्य एक ऊर्जा है। मनुष्य को पृथ्वीलोक पर जीवन प्राप्त होने से पूर्व मनुष्य बैकुण्ठधाम की एक सूक्ष्मऊर्जा होता है। मनुष्य को पृथ्वीलोक पर जीवन प्राप्त होने पर मनुष्य का सूक्ष्मऊर्जा से पिंडऊर्जा में परिवर्तन हो जाता है। मनुष्य को पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर अपनी पिंडऊर्जा का पर्याय विस्तार करने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य को सभी ७ ग्रहलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर बैकुण्ठधाम में जीवन प्राप्त होता है। मनुष्य को बैकुण्ठधाम में जीवन प्राप्त होने पर मनुष्य का पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तन हो जाता है। मनुष्य को बैकुण्ठधाम में

परममोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य परमऊर्जा से परिवर्तित होकर परमेश्वर का अविभाज्य अंश परमशांति ० आयाम हो जाता है।

ईश्वर दुर्गा के मच्छ, कच्छ, गज, नारद आदि ४ अवतार होते हैं। मच्छ, कच्छ, गज सभी अवतार भोगी होते हैं। केवल नारद अवतार कर्मी होते हैं। सभी मनुष्य नारद अवतार हैं। जो मनुष्य अपनी कुंडलिनी शक्ति को जागृत करते हुए मूलाधार चक्र में मौजूद ४ आध्यात्मिक शक्तियां और आज्ञा चक्र में मौजूद २ आध्यात्मिक शक्तियां आदि कुल ६ रहस्यमय आध्यात्मिक शक्तियों को प्राप्त करता है, वो मनुष्य अपना मूल नारद अवतार प्राप्त करता है। मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए कुंडलिनी शक्ति की आवश्यकता नहीं होती है। मनुष्य आध्यात्मिक शक्तियों के बिना भी मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है।

सभी कीड़ेमकोड़े, पशुप्राणि, पक्षी आदि जीव भोगी होने के कारण वर्तमान पर्व के अंत में सभी जीव को अपना जीवनकाल परिपूर्ण भोगने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है, तबतक प्रत्येक जीव को जन्म-मृत्यु के चक्र से गुजरना होता है। सभी मनुष्य कर्मी होने के कारण सभी मनुष्य को कर्म करते हुए मोक्ष की प्राप्ति करना अनिवार्य होता है। मनुष्य को बिना कर्म किए मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए अपने मन का पर्याप्त विस्तार करते हुए मन की पूर्णता प्राप्त करना अनिवार्य होता है। मनुष्य स्वयं अपने कर्म से अपने मन का विस्तार कर सकता है। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के मन का विस्तार नहीं कर सकता है। मनुष्य धर्म एवं अर्थ की पूर्ति करते हुए पुण्य की प्राप्ति कर सकता है। केवल पुण्य की प्राप्ति से मन का विस्तार होता है। मनुष्य को पर्याप्त मन का विस्तार करने के लिए पर्याप्त पुण्य की प्राप्ति होना आवश्यक होता है।

मनुष्य के मन की शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद आदि ८ अवस्थाएं होती हैं। मनुष्य स्वयं अपने कर्म से अपने मन की सभी ८ अवस्थाओं की अनुभूति कर सकता है। मनुष्य धर्म एवं काम की पूर्ति करते हुए अपने मन की सभी ८ अवस्थाओं की अनुभूति कर सकता है। मनुष्य जब अपने मन की सभी ८ अवस्थाओं की अनुभूति करता है, तब मनुष्य के मन को पूर्णता प्राप्त होती है।

जब मनुष्य के मन का पर्याप्त विस्तार होता है, किन्तु मन को पूर्णता प्राप्त नहीं होती है, तब मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। जब मनुष्य के मन को पूर्णता प्राप्त होती है, किन्तु मन का पर्याप्त

विस्तार नहीं होता है, तब मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती है। मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए अपने मन का पर्याप्त विस्तार और मन की पूर्णता आदि दोनों की पूर्ति करना अनिवार्य होता है।

मनुष्य स्तुति, ज्ञान, सेवा आदि ३ पवित्र क्रियाओं को नियमित करते हुए अत्यधिक पुण्य की प्राप्ति कर सकता है। जब मनुष्य किसी अन्य मनुष्य के अच्छे कार्यों की स्तुति कर रहा होता है, तब मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य जितना ज्यादा स्तुति करता है, मनुष्य को उतना ज्यादा पुण्य की प्राप्ति होती है। जब मनुष्य किसी भी भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों का ज्ञान प्राप्त कर रहा होता है, तब मनुष्य को पुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य जितना ज्यादा ज्ञान प्राप्त करता है, मनुष्य को उतना ज्यादा पुण्य की प्राप्ति होती है। जब मनुष्य अपने पुत्र एवं शिष्य को किसी भी भौतिक एवं आध्यात्मिक विषयों का उचित ज्ञान दे रहा होता है, तब मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है। जब मनुष्य किसी अन्य मनुष्य, पशुपक्षी, परिवार, समाज, देश, विश्व, एवं प्रकृति की सेवा कर रहा होता है, तब मनुष्य को परमपुण्य की प्राप्ति होती है। मनुष्य जितना ज्यादा सेवा करता है, मनुष्य को उतना ज्यादा परमपुण्य की प्राप्ति होती है।

मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि आत्मा के ८ संस्कार होते हैं। मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि प्रत्येक भाव मनुष्य के मन की विभिन्न अवस्था को सक्रिय एवं नियंत्रित करता है। मुक्ति भाव से मन की शून्य अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। आनंद भाव से मन की चेतन अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। ज्ञान भाव से मन की अर्धचेतन अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। शांति भाव से मन की अवचेतन अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। सुख भाव से मन की भावना अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। प्रेम भाव से मन की रचना अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। पवित्रता भाव से मन की स्वभाव अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है। शक्ति भाव से मन की अर्धनारद अवस्था सक्रिय एवं नियंत्रित होती है।

मनुष्य को अपने मन की पूर्णता प्राप्त करने के लिए अपने मन की शून्य, चेतन, अर्धचेतन, अवचेतन, भावना, रचना, स्वभाव, अर्धनारद आदि सभी ८ अवस्थाओं की अनुभूति करना आवश्यक होता है। मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता, शक्ति आदि ८ ईश्वरीय भाव की अनुभूति करने पर मनुष्य के मन की सभी ८ अवस्थाओं की अनुभूति हो सकती है। मनुष्य का ज्ञान उसकी युक्ति होती है। मनुष्य की पवित्रता उसका सत्य व्यवहार होता है। मनुष्य की शक्ति उसका संयम होती है।

मनुष्य धर्म एवं अर्थ संबंधित विभिन्न कर्म करते हुए मुक्ति, आनंद, ज्ञान, शांति, सुख, प्रेम, पवित्रता आदि ७ ईश्वरीय भाव की अनुभूति कर सकता है। मनुष्य को शक्ति भाव की अनुभूति करने के लिए

कामतृप्ति की अनुभूति होना आवश्यक होता है। कोई भी मनुष्य बिना कामतृप्ति के शक्ति भाव की अनुभूति नहीं कर सकता है। इसलिए मनुष्य के मन को पूर्णता प्राप्त करने के लिए कामतृप्ति की अनुभूति होना अनिवार्य होता है।

मनुष्य को अपने मन का पर्याय विस्तार एवं मन की पूर्णता प्राप्त करने के लिए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करना अनिवार्य होता है। केवल धर्म, अर्थ की पूर्ति करने से मनुष्य के मन का पर्याय विस्तार हो सकता है, किन्तु मन को पूर्णता प्राप्त नहीं हो सकती है। केवल धर्म, काम की पूर्ति करने से मन को पूर्णता प्राप्त हो सकती है, किन्तु मन का पर्याय विस्तार नहीं हो सकता है। मनुष्य बिना धर्म के अर्थ अथवा काम की पूर्ति कर ही नहीं सकता है।

मनुष्य अपने व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक कर्तव्यों का पालन करते हुए धर्म की पूर्ति कर सकता है। मनुष्य अपनी शारिरिक एवं मानसिक जरूरतों संबंधित कर्म करते हुए अर्थ की पूर्ति कर सकता है। मनुष्य कामभोग द्वारा कामतृप्ति की अनुभूति करते हुए काम की पूर्ति कर सकता है। मनुष्य को धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति होने पर मोक्ष की प्राप्ति होती है। मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को निचले ग्रहलोक से उच्चतम ग्रहलोक पर जीवन प्राप्त होता है।

पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक होते हैं। पृथ्वीलोक सबसे निचतम ग्रहलोक है। प्रभुलोक सबसे उच्चतम ग्रहलोक है। मनुष्य एक पिंडऊर्जा है। मनुष्य को पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए सभी ७ ग्रहलोक पर अपने ७ जन्मों को भोगकर मोक्ष की प्राप्ति करनी होती है। जब मनुष्य सभी ७ ग्रहलोक पर मोक्ष की प्राप्ति करते हुए वैकुण्ठधाम में जीवन प्राप्त करता है, तब मनुष्य पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है।

जबतक मनुष्य ग्रहलोक पर होता है, तबतक मनुष्य को निम्नतम ग्रहलोक से उच्चतम ग्रहलोक और उच्चतम ग्रहलोक से बैकुण्ठ में अवतरित होने के लिए मोक्ष की प्राप्ति करना अनिवार्य होता है। जब मनुष्य बैकुण्ठ में होता है, तब मनुष्य को अंतिम मोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य को अंतिम मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को दोबारा किसी स्थान पर मोक्ष को प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है, उस अंतिम मोक्ष को परममोक्ष कहते हैं।

पृथ्वीलोक पर मनुष्य का पहला पिंडजन्म होता है। पृथ्वीलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को स्वर्गलोक पर जीवन प्राप्त होता है। स्वर्गलोक पर मनुष्य का दूसरा पिंडजन्म होता है। स्वर्गलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को प्रीतिलोक पर जीवन प्राप्त होता है। प्रीतिलोक पर मनुष्य का

तीसरा पिंडजन्म होता है। प्रीतिलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को रसलोक पर जीवन प्राप्त होता है। रसलोक पर मनुष्य का चौथा पिंडजन्म होता है। रसलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को स्तब्धलोक पर जीवन प्राप्त होता है।

स्तब्धलोक पर मनुष्य का पांचवा पिंडजन्म होता है। स्तब्धलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को प्रज्ञालोक पर जीवन प्राप्त होता है। प्रज्ञालोक पर मनुष्य का छटवां पिंडजन्म होता है। प्रज्ञालोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को प्रभुलोक पर जीवन प्राप्त होता है। प्रभुलोक पर मनुष्य का सातवां पिंडजन्म होता है। प्रभुलोक पर मोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य को बैकुंठ पर जीवन प्राप्त होता है। बैकुंठ पर परममोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य सदैव के लिए परमेश्वर का अविभाज्य अंश हो जाता है।

जिस मनुष्य को एक बार मोक्ष की प्राप्ति होती है, उस मनुष्य के कोई भी कर्म उसके मोक्ष का क्षय नहीं कर सकते हैं, मोक्षकाल पूर्ण होने पर उस मनुष्य को अवश्य स्वर्गलोक पर जीवन प्राप्त होता है। जो मनुष्य एक बार स्वर्गलोक पर जीवन प्राप्त करता है, वो मनुष्य दोबारा पृथ्वीलोक पर जीवन प्राप्त नहीं कर सकता है। मोक्ष के कारण मनुष्य ग्रहलोक की पिंडऊर्जा से बैकुण्ठधाम की परमऊर्जा में परिवर्तित होता है। परममोक्ष के कारण मनुष्य सदैव के लिए बैकुण्ठधाम की परमऊर्जा से परमशांति ० आयाम में परिवर्तित हो जाता है।

१४. परमशांति

मैं नारायण परमेश्वर हूँ। मेरा शून्य आयाम परमशांति है। मैंने अपना बैकुंठगर्भ का बाह्यभाग शून्य आयाम परमशांति में स्थापित किया है। मैंने अपना अंतरभाग समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ८ आयामों में स्थापित किया है।

पृथ्वीलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा आदि ३ आयामों से निर्मित होता है। स्वर्गलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति आदि ४ आयामों से निर्मित होता है। प्रीतिलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति आदि ४ आयामों से निर्मित होता है। रसलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र आदि ५ आयामों से निर्मित होता है। स्तब्धलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, आदि ५ आयामों से निर्मित होता है।

प्रज्ञालोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश आदि ६ आयामों से निर्मित होता है। प्रभुलोक पर मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश आदि ६ आयामों से निर्मित होता है। बैकुंठ में मनुष्य का शरीर समय, स्थान, ऊर्जा, शक्ति, चक्र, प्रकाश, कंपन, माया आदि ८ आयामों से निर्मित होता है।

मनुष्य निच्यतम ग्रहलोक से उच्चतम ग्रहलोक पर मोक्ष की प्राप्ति करते हुए अपने ३ आयाम के शरीर को ८ आयाम के शरीर में परिवर्तित करता रहता है, किन्तु मनुष्य का मन सदैव ऊर्जा आयाम में होता है। जबतक मनुष्य ग्रहलोक एवं बैकुंठ में होता है, तबतक मनुष्य सूक्ष्मऊर्जा, पिंडऊर्जा, परमऊर्जा आदि ३ विभिन्न ऊर्जा आयाम में परिवर्तित होता रहता है।

मनुष्य को केवल बैकुंठ में परममोक्ष एवं परममुक्ति प्राप्त होती है। पृथ्वीलोक पर मोक्ष प्राप्त करके स्वर्गलोक पर जीवन प्राप्त करना मनुष्य के जीवन का प्रथम उद्देश्य होता है। पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि ७ ग्रहलोक पर ७ पिंडजन्म का जीवनचक्र पूरा करके बैकुंठ में जीवन प्राप्त करना मनुष्य के जीवन का दूसरा उद्देश्य होता है। बैकुंठ में परममोक्ष एवं परममुक्ति प्राप्त करके परमशांति शून्य आयाम में परिवर्तित हो जाना मनुष्य के जीवन का तीसरा एवं अंतिम उद्देश्य होता है।

मनुष्य का पृथ्वी, स्वर्ग, प्रीति, रस, स्तब्ध, प्रज्ञा, प्रभु आदि सभी ७ ग्रहलोक के पृष्ठभूमि पर जीवन होता है, परिणाम सभी ७ ग्रहलोक पर मनुष्य कर्मी होता है। मनुष्य का बैकुंठ के पृष्ठभूमि के भीतर जीवन होता है, परिणाम बैकुंठ के भीतर मनुष्य भोगी होता है।

मनुष्य सर्वप्रथम बैकुंठ के भीतर सूक्ष्मऊर्जा होता है, मनुष्य बैकुंठ से पृथ्वीलोक पर अवतरित होने पर पिंडऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है। मनुष्य को पिंडऊर्जा से परमऊर्जा में परिवर्तित होने के लिए सनातन धर्म के अनुकूल कर्म करना अनिवार्य होता है। मनुष्य ग्रहलोक से बैकुंठ में अवतरित होने पर परमऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है।

बैकुंठ में मनुष्य भोगी होता है। जब मनुष्य बैकुंठ में अपने सभी पुण्य एवं परमपुण्य के कर्मा भोगता है, तब मनुष्य को बैकुंठ में परममोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य को बैकुंठ में परममोक्ष की प्राप्ति होने पर मनुष्य ऊर्जा आयाम से परमशांति आयाम में परिवर्तित हो जाता है।

मनुष्य को शून्य आयाम परमशांति अवस्था प्राप्त होने पर मनुष्य सभी प्रकार के कर्म एवं भोग से सदैव के लिए मुक्ति पाता है, ऐसा मनुष्य निरंतर परमआनंद एवं परमशांति की अनुभूति करता रहता है। जबतक मनुष्य ग्रहलोक एवं बैकुंठ में होता है, तबतक मनुष्य परमेश्वर नारायण के भीतर बैकुंठगर्भ में होकर भी परमेश्वर का अंश नहीं होता है। जब मनुष्य बैकुंठ में परममोक्ष की प्राप्ति करके परममुक्ति प्राप्त करता है, तब मनुष्य परमशांति आयाम में परिवर्तित होकर परमेश्वर का अविभाज्य अंश हो जाता है, परमेश्वर में एकरूप हो जाता है।

सनातन धर्म



'सनातन धर्म' नामक इस किताब में सनातन धर्म, धर्म के नियम, संस्कृति, धर्म प्रतीक, अर्थ, कर्मा, पाप-पुण्य, भक्ति, काम, जन्म-मृत्यु, अजर-अमर, मोक्ष, परमशांति आदि धार्मिक एवं आध्यात्मिक विषयों का परिपूर्ण ज्ञान मौजूद है। प्रत्येक मनुष्य को मोक्ष की प्राप्ति के लिए धर्म, अर्थ, काम की पूर्ति करना अनिवार्य होता है। धर्म की पूर्ति करने के लिए धर्मज्ञान की आवश्यकता होती है। धर्मज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रत्येक मनुष्य को इस 'सनातन धर्म' नामक किताब को अवश्य पढ़ना है।